ISSN No : 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

SAAHAS

Society for Advancement in Agriculture, Horticulture & Allied Sectors

भाग-6 अंक-1 अप्रैल 2026

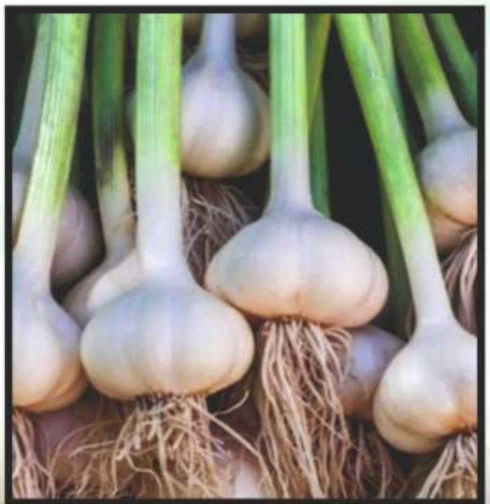

ISSN No. 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

3/2, ड्रमण्ड रोड, (नथानी अस्पताल के सामने), प्रयागराज-211001, (U.P.) दूरभाष-9452254524
वेबसाइट : saahasindia.org, ई-मेल-contact.saahas@gmail.com
Article Submission :– krishiudyandarpan.hi@gmail.com

सम्पादकीय मण्डल

प्रधान संपादक : **डॉ. विवेक कुमार त्रिपाठी**
अधिष्ठाता, उद्यान संकाय, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

वरिष्ठ संपादक : **डॉ. रोशन लाल राऊत**
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं विभागाध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, बालाघाट (एम.पी.)

सह सम्पादक गण : **डॉ. नीलम राव रंगारे**
वैज्ञानिक, संस्था निदेशालय
इन्दिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, लाभण्डी, रायपुर (छत्तीसगढ़)

: **डॉ. नंगखाम जेम्स सिंह**
पशुचिकित्सक क्षेत्र सहायक,पशुपालन एवं डेयरी विभाग, शुआट्स, (उ.प्र.)

: **डॉ. खलील खान**
मृदा वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र दलीप नगर कानपुर देहात, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

: **डॉ. प्रमिला**
सहायक अध्यापक-सह-वैज्ञानिक, सब्जी विज्ञान, उद्यान विभाग
पं. दीन दयाल उद्यान एवं वानिकी महाविद्यालय, पिपरकोठी, बिहार

: **डॉ सुधीर दास**
सह-प्राध्यापक, सब्जी विज्ञान, उद्यान विभाग, पं. दीन दयाल उपाध्याय उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, पिपरकोठी, बिहार

: **डॉ आशीष रंजन**
सहायक प्रोफेसर सह जूनियर वैज्ञानिक, उद्यान विभाग, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर, बिहार

: **डॉ. आशुतोष शुक्ला**
मृदा विज्ञान विभाग, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, सतना, मध्य प्रदेश

: **डॉ. सुनील कुमार**
असिस्टेंट प्रोफेसर, पादप रोग विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

: **डॉ. चंचल सिंह**
विषय विशेषज्ञ, पौध संरक्षण, कृषि विज्ञान केंद्र, कृषि महाविद्यालय, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा, उत्तर प्रदेश

: **डॉ हिमांशु त्रिवेदी**
सह आचार्य एवं निदेशक
स्कूल ऑफ़ एडवांस्ड एग्रीकल्चर साइंसेज़ एंड टेक्नोलॉजी
छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय कानपुर, (उ.प्र.)

: **प्रखर खरे**
एम.एस.सी. उद्यान विज्ञान विभाग, शुआट्स, प्रयागराज (उ.प्र.)

पांडुलिपि संपादक : **स्निग्धा हल्दर**
सहायक संपादक, एग्रो इण्डिया पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ.प्र.)

कंटैट लेखक/ स्तंभ लेखक : **डॉ. विशाल नाथ पाण्डेय**
विशेष कार्य अधिकारी
आई.सी.ए.आर., आई.ए.आर.आई, झारखण्ड, हजारीबाग (झारखण्ड)

फोटोग्राफी : **स्वप्निल सुभाष स्वामी**
वेब एडिटर प्रितेश हलदार

प्रकाशक : **एग्रो इण्डिया पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ.प्र.)**

प्रकाशक : **Society for Advancement in Agriculture, Horticulture & Allied Sectors (SAAHAS)**

❖❖

ISSN No. 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

इस पृष्ठ में

- **AgriWatch:** भारत का प्रमुख कृषि बाजार विश्लेषण प्लेटफॉर्म और किसानों के लिए इसकी भूमिका 1 - 3
  अंजना गुप्ता* एवं आर. एल. राउत
- टमाटर की पारिस्थितिकीय तन्त्र में समेकित फसल प्रबन्धन 4 - 7
  चंचल सिंह*, दीक्षा पटेल, श्याम सिंह, नरेन्द्र सिंह एवं नन्द किशोर बाजपेई
- बैंगन फसल में रोगो की पहचान, प्रभाव एवं नियंत्रण की विधियाँ 8 - 11
  आर्यन सिंह, शोभित यादव, अनमोल चौरसिया, अशोक कुमार एवं सुनील कुमार*
- जलवायु परिवर्तन का उत्तर प्रदेश के सब्जी उत्पादन पर प्रभाव: रोग प्रबंधन और समाधान 12 - 15
  सुनील कुमार*, प्रद्युम्न कुमार सिंह, अशोक कुमार, आर्यन सिंह एवं शोभित यादव
- फसलों में समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन 16 - 18
  खलील खान*, अजय कुमार सिंह, राजेश राय, अरूण कुमार सिंह, शशीकान्त एवं शुभम यादव
- भारतीय कृषि में ए.आई. का भविष्य और महत्व 19 - 20
  शरद बिसेन* एवं धारणा बिसेन
- लहसुन की उन्नत खेती एवं प्रबंधन 21 - 23
  एस. एल. वास्केल*, ए. के. त्रिपाठी एवं रिंकू चौहान
- भारतीय बीज विधेयक 2025 की मुख्य विशेषताएं 24 - 25
  अनुभव ठाकुर*, कमरुल निस्सा, रोहित वर्मा एवं नरेंद्र कुमार भरत
- भारत में अखरोट (Walnut) की उन्नत खेती 26 - 29
  कल्लोल कुमार प्रमाणिक*, जितेन्द्र कुमार, संतोष वाटपाडे, पूजा देवी, मधु पटियाल, दीपक नेगी, राम सिंह एवं स्वरूप लाल
- प्रमुख फूलों के रोग, कीट एवं उनका प्रबंधन 30 - 34
  फूल सिंह मरकाम*, प्रदीप कुमार बढ़ाई एवं एन. के. रस्तोगी
- चना फसल की खेती विधियां: प्राकृतिक, जैविक एवं परंपरागत 35 - 37
  गौरव शुक्ला* एवं जगन्नाथ पाठक
- जैव-संवर्धित बेर: कुपोषण के खिलाफ एक प्राकृतिक साथी 38 - 40
  सतपाल, शिव नारायण धाकड़, ताज़ीम फ़ातमा जाफ़रा* एवं प्रमिला
- परवल उत्पादन तकनीक: टिकाऊ सब्जी खेती का एक लाभकारी विकल्प 41 - 43
  शिव नारायण धाकड़*, अचला सुमन, प्रमिला एवं प्रीति उपाध्याय

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के निजी हैं। प्रकाशित/सम्पादक इसके लिये उत्तरदायी नहीं है। इस पत्रिका से सम्बन्धित वाद का निस्तारण क्षेत्र प्रयागराज होगा।*

- सेमियालता से लाख उत्पादन - ग्रामीण आजीविका हेतु वरदान 44 - 45
  अनुभा श्रीवास्तव*, संजय सिंह एवं अनीता तोमर
- अमेजन वेब सर्विस (AWS) ग्लोबल वार्मिंग और कृषि - एक आधुनिक डिजिटल समाधान 46 - 48
  अंजना गुप्ता*, रश्मि शुक्ला, डी. के. सिंह, नीलू विश्वकर्मा एवं ऋचा सिंह
- निर्यात-गुणवत्ता वाले फल प्राप्त करने हेतु लीची गुच्छों की बैगिंग तकनीक 49 - 50
  शिल्पा*, प्रियंका ठाकुर एवं सिमरन कश्यप

❖❖

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के निजी हैं। प्रकाशित/सम्पादक इसके लिये उत्तरदायी नहीं है। इस पत्रिका से सम्बन्धित वाद का निस्तारण क्षेत्र प्रयागराज होगा।*

ISSN No. 2583-3316

AgriWatch: भारत का प्रमुख कृषि बाजार विश्लेषण प्लेटफॉर्म और किसानों के लिए इसकी भूमिका

अंजना गुप्ता[1]* एवं आर. एल. राउत[2]

[1]कृषि विज्ञान केंद्र, जबलपुर एवं [2]कृषि विज्ञान केंद्र छिन्दवाड़ा, तामिया, मध्य प्रदेश

पत्राचारकर्ता: blogger.sp2020@gmail.com

परिचय

भारत में कृषि सिर्फ एक आर्थिक गति-विधि नहीं, बल्कि करोड़ों लोगों की आजीविका का आधार है। देश के लगभग 55% से अधिक लोग खेती और इससे जुड़े कार्यों पर निर्भर हैं। इसके बावजूद कृषि बाजार अस्थिरता, मौसम जोखिम, अनियमित मांग-आपूर्ति, फसलों की कीमतों में उतार-चढ़ाव और सरकारी नीतियों में बदलाव जैसी चुनौतियों से भरी हुई है। ऐसी परिस्थितियों में एक सटीक और विश्वसनीय बाजार विश्लेषण प्रणाली किसानों और व्यापारियों दोनों के लिए बेहद महत्वपूर्ण हो जाती है। बाजार की सटीक जानकारी मिलने पर किसान फसल चयन, बुवाई, भंडारण, बिक्री और जोखिम प्रबंधन जैसे निर्णय अधिक आत्मविश्वास से ले सकते हैं।

इसी शून्य को भरने के लिए AgriWatch नामक मंच सामने आया- एक ऐसा प्लेटफॉर्म जो कृषि बाजार की वास्तविक, अद्यतित और विश्लेषण आधारित जानकारी प्रदान करता है। AgriWatch किसानों से लेकर बड़े कृषि-उद्योगों तक सभी हितधारकों को डेटा-आधारित निर्णय लेने में सक्षम बनाता है।

AgriWatch के बारे में (इतिहास एवं पृष्ठभूमि)

AgriWatch भारत के शुरुआती और प्रमुख कृषि बाजार विश्लेषण प्लेटफॉर्मों में से एक है, जिसे कृषि मूल्य श्रृंखला (AgriValue Chain) की समझ को ध्यान में रखते हुए विकसित किया गया। इसका उद्देश्य किसानों, व्यापारियों, निर्यातकों, खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों, कृषि निवेशकों और नीति-निर्माताओं को विश्वसनीय बाजार रिपोर्ट और विश्लेषण उपलब्ध कराना है।

AgriWatch ने ग्रामीण इलाकों में किसानों के लिए उपलब्ध जानकारी के अभाव को पहचाना और तकनीक आधारित समाधान प्रदान किया। यह प्लेटफॉर्म रीयल-टाइम डाटा, कीमतों के ऐतिहासिक रिकॉर्ड, सटीक मांग-आपूर्ति विश्लेषण और विशेषज्ञों के द्वारा तैयार रिपोर्ट्स उपलब्ध कराता है। इसके माध्यम से किसान और उद्योग बिना किसी भ्रम के डेटा आधारित निर्णय ले सकते हैं।

AgriWatch की मुख्य सेवाएँ

1. मार्केट इंटेलिजेंस रिपोर्ट्स

AgriWatch विभिन्न फसलों और कृषि वस्तुओं पर दैनिक, साप्ताहिक और मासिक रिपोर्ट तैयार करता है। इनमें शामिल होते हैं

- मंडियों में चल रही कीमतें
- पिछले दिनों की मूल्य गतिविधियाँ
- मांग-आपूर्ति की स्थिति
- व्यापार एवं निर्यात-आयात के संकेत
- वर्तमान और आगामी मौसम का प्रभाव

ये रिपोर्ट किसानों को यह तय करने में मदद करती हैं कि किस फसल में निवेश करना है और कब बेचना अधिक लाभदायक रहेगा।

2. मूल्य पूर्वानुमान (Commodity Price Forecasting)

AgriWatch उन्नत आर्थिक मॉडल, सांख्यिकीय तकनीकों और AI आधारित पूर्वानुमान सिस्टम का उपयोग करता है। इससे

- किसानों को भाव बढ़ने या घटने का अनुमान
- ट्रेडर्स को खरीद-फरोख्त का सही समय
- उद्योगों को कच्चे माल की योजना बनाने में मदद मिलती है

फसल की कीमतों में अस्थिरता से निपटने के लिए यह सेवा बेहद महत्वपूर्ण है।

3. फसल उत्पादन अनुमान (Crop Estimation)

AgriWatch सैटेलाइट तकनीक, ड्रोन सर्वे, फील्ड-लेवल डेटा और किसानों के इंटरव्यू का उपयोग कर उत्पादन अनुमान

तैयार करता है। इसमें शामिल हैं

- फसल क्षेत्र (Acreage)
- उपज का अनुमान
- उत्पादन के रुझान
- मौसम प्रभाव और जोखिम विश्लेषण

ये अनुमान सरकार, उद्योग और किसानों सभी को रणनीति बनाने में मदद करते हैं।

4. Acreage Market News

AgriWatch वास्तविक समय में उपलब्ध कराता है

- प्रमुख मंडियों का डेटा
- सरकारी नीतियों में बदलाव
- आयात-निर्यात शुल्क में अपडेट
- कृषि सब्सिडी और स्कीम समाचार
- देश-विदेश के कृषि बाजार घटनाक्रम

किसान इस सूचना के आधार पर अपनी फसल भंडारण एवं बिक्री रणनीति बनाते हैं।

5. मूल्य श्रृंखला विश्लेषण (Value Chain Analysis)

AgriWatch एक फसल की "Farm to Fork" यात्रा का विश्लेषण करता है

- उत्पादन
- भंडारण
- परिवहन
- प्रोसेसिंग
- थोक और खुदरा बिक्री

इस विश्लेषण से उद्योगों को सप्लाई चेन की कमियों को दूर करने और किसानों को बेहतर दाम दिलाने में मदद मिलती है।

6. जोखिम प्रबंधन एवं परामर्श (Risk Management & Advisory)

AgriWatch किसानों और कंपनियों को बताता है

- कब बेचें?
- कितने समय तक स्टॉक रखें?
- कौन-सी फसल में जोखिम अधिक है?
- किस वस्तु की मांग बढ़ने की संभावना है?

Risk mitigation रणनीतियाँ किसानों को नुकसान से बचाती हैं और आय बढ़ाने में मदद करती हैं।

किसानों के लिए AgriWatch का महत्व

आज के समय में किसान को केवल खेती ही नहीं, बल्कि बाजार की समझ भी जरूरी है। AgriWatch किसानों को यह समझने में मदद करता है:

- कौन-सी फसल भविष्य में लाभ देगी
- किस समय फसल बेचना सबसे उचित रहेगा
- मंडी बनाम निजी खरीदार कौन बेहतर है
- किस राज्य में कौन-सी फसल की कीमत अधिक चल रही है
- MSP और वास्तविक बाजार कीमतों में अंतर

इसके साथ ही मौसम, बुवाई क्षेत्र, फसल नुकसान, आयात-निर्यात जैसे पहलुओं की जानकारी भी किसान को अधिक व्यावसायिक निर्णय लेने में सक्षम बनाती है।

AgriWatch की सेवाएँ

1. Bulk Procurement Planning (थोक खरीद योजना) AgriWatch यह बताता है कि किस मंडी या राज्य में कीमत कम है, किस समय बड़ी मात्रा में खरीदना फायदेमंद होगा, और भविष्य में दाम बढ़ने या घटने की संभावना क्या है।

2. Raw Material Cost Analysis (कच्चे माल की लागत विश्लेषण) उद्योगों को यह समझने में मदद करता है कि कच्चे माल की वर्तमान कीमत, पिछले वर्षों का ट्रेंड और भविष्य का अनुमान क्या है, ताकि लागत को नियंत्रित किया जा सके।

3. भविष्य की मांग का अनुमान (Demand Forecasting) बाजार डेटा और उपभोग पैटर्न के आधार पर बताता है कि आने वाले समय में किस फसल या उत्पाद की मांग बढ़ेगी या घटेगी, जिससे कंपनियाँ सही रणनीति बना सकें।

4. Contract Farming सलाह किसानों और कंपनियों को यह जानकारी देता है कि किस फसल पर अनुबंध करना लाभदायक रहेगा, जोखिम क्या है, अनुमानित उत्पादन कितना है और अनुबंध की शर्तें कैसे निर्धारित की जाएँ।

5. Competitive Advantage (प्रतिस्पर्धात्मक लाभ) सटीक बाजार विश्लेषण, मूल्य रुझान, जोखिम अनुमान और रणनीतिक सलाह के कारण कंपनियाँ व FPOs अपने प्रतिस्पर्धियों से आगे रह पाती हैं और अधिक लाभ कमाती हैं। कीमतों और उत्पादन के सटीक अनुमान से कंपनियाँ बेहतर रणनीति बना पाती हैं।

AgriWatch Maarket Analysis के प्रमुख फीचर

- State-wise और district - wise मूल्य तुलना
- Multi - commodity analysis
- Daily arrivals और बिक्री
- Export–import data
- High-frequency charts
- Trend visualization
- कृषि नीति विश्लेषण

ये फीचर प्लेटफॉर्म को डेटा विश्लेषण का एक शक्तिशाली

स्रोत बनाते हैं।

कवर की जाने वाली प्रमुख फसलें

AgriWatch कई कृषि वस्तुओं को कवर करता है

- **अनाजः** गेहूँ, धान, मक्का
- **दालेंः** चना, उड़द, तुअर
- **तिलहनः** सोयाबीन, सरसों, मूंगफली
- **मसालेः** जीरा, धनिया, मिर्च
- **बागवानीः** फल एवं सब्जियाँ
- **वाणिज्यिक फसलेंः** कपास, जूट
- **Plantation crops:** चाय, कॉफी, रबर

इस व्यापक कवरेज से कृषि बाजार का सही परिदृश्य मिलता है।

केस स्टडीः सोयाबीन बाजार का उदाहरण

मान लीजिए किसी किसान ने सोयाबीन बोई है। AgriWatch से उसे पता चलता है

- पिछले वर्षों की कीमतें
- Crushing demand का स्तर
- निर्यात कीमतें
- Arrivals का अनुमान
- भाव बढ़ने या घटने की संभावना

अगर मान लें कि कीमतें अगले महीने बढ़ने की संभावना है, तो किसान तुरंत बिक्री न करके इंतजार कर सकता है। वहीं process or bulk खरीद की रणनीति बना सकता है। परिणाम स्वरूप दोनों को बेहतर लाभ मिलता है।

चुनौतियाँ एवं सीमाएँ

हालाँकि AgriWatch प्रभावी है, लेकिन कुछ चुनौतियाँ भी हैं

- ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट की कमी
- विभिन्न राज्यों से डेटा की असमानता
- मौसम का अनिश्चित व्यवहार
- सरकारी डेटा में देरी
- कृषि मंडियों की पारदर्शिता की कमी

इन चुनौतियों के बावजूद AgriWatch लगातार सुधार कर रहा है।

भविष्य की संभावनाएँ

- AI आधारित मूल्य पूर्वानुमान
- अधिक सटीक सैटेलाइट डेटा
- किसान - केंद्रित मोबाइल ऐप
- FPOs के लिए B2B marketplace
- Digital mandi इंटीग्रेशन
- Smart advisory tools

जैसी सुविधाएँ विकसित कर सकता है, जिससे किसान और उद्योग और भी सक्षम बनेंगे।

निष्कर्ष

AgriWatch भारतीय कृषि में एक महत्वपूर्ण बदलाव लाने वाला प्लेटफॉर्म है। यह सिर्फ एक सूचना सेवा नहीं, बल्कि किसानों और कृषि उद्योगों का भरोसेमंद बाजार साथी है। इसकी रिपोर्ट्स, विश्लेषण और सलाह खेती को पारंपरिक प्रकिया से आगे बढ़ाकर डेटा-आधारित, स्मार्ट और वैज्ञानिक गतिविधि बनाती हैं।

आज जब किसान आय बढ़ाने, जोखिम घटाने और समय पर बाजार तक पहुँचने की चुनौती से जूझ रहा है, AgriWatch उसकी जरूरतों को पूरा करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। आने वाले वर्षों में यह प्लेटफॉर्म कृषि क्षेत्र को नई दिशा देगा और किसानों का भविष्य अधिक सुरक्षित और लाभदायक बनाएगा।

सन्दर्भ

- Agriwatch.comAgriwatch
- AgriWatch – About UsAgriwatch+1
- AgriWatch – Market Prices & Reports Agriwatch+1
- oldwebsite.agriwatch.in – Market Intelligence

❖❖

ISSN No. 2583-3316

टमाटर की पारिस्थितिकीय तन्त्र में समेकित फसल प्रबन्धन

चंचल सिंह[1]*, दीक्षा पटेल[2], श्याम सिंह[3], नरेन्द्र सिंह[4] एवं नन्द किशोर बाजपेई[5]

[1]विषय वस्तु विशेषज्ञ (पौध सुरक्षा), [2]विषय वस्तु विशेषज्ञ (कृषि प्रसार), [3]वरिष्ठ वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान), [4]प्राध्यापक (सस्य विज्ञान), [5]निदेशक प्रसार

बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बाँदा, उत्तर प्रदेश, भारत

पत्राचारकर्ता: chanchalsingh9@gmail.com

परिचय

टमाटर को सम्पूर्ण भारतवर्ष में सफलतापूर्वक उगाया जाता है। इसमें कार्बोहाइड्रेट, बिटामिन,कैल्शियम, आयरन तथा अन्य खनिज लवण अधिक मात्रा में उपस्थित रहते है। इसके फल में लाइकोपीन नामक वर्णक (पिगमेंट) पाया जाता है, जिसे विश्व का सबसे महत्वपूर्ण एंटीऑक्सीडेंट बताया गया है। इन सबके अलावा कैरोटिनायडस एवं विटामिन सी भी टमाटर में बहुतायत मात्रा में पाए जाते है। ताजे फल के अतिरिक्त इसको परिरक्षित करके चटनी, जूस, अचार, सॉस, केचप, प्यूरी इत्यादि के रूप में उपयोग में लाया जाता है। इसके पके फलों की डिब्बाबन्दी भी की जाती है। भारतवर्ष से टमाटर का निर्यात मुख्य रूप से पाकिस्तान, संयुक्त राज्य अमीरात, बांग्लादेश, नेपाल, सउदी अरब, ओमान, मालदीप, बहरीन एवं मलावी को किया जाता है।

जलवायु

टमाटर की अच्छी उपज में तापमान का बहुत बड़ा योगदान होता है। फसल के अच्छे बढ़वार लिए आदर्श तापमान 20-25^{o} सेल्सियस होता है। तापमान अधिक होने पर फूल एवं अपरिपक्व फल टूटकर गिरने लगते है। जब तापक्रम 13^{o} सेल्सियस से कम एवं 35^{o} सेल्सियस से ज्यादा होता है, तब परागकण का अंकुरण बहुत कम हो जाता है। परिणामस्वरूप फल कम लगते है, साथ ही फलों का स्वरुप भी खराब हो जाता है।

मृदा एवं प्रक्षेत्र प्रबन्धन

समुचित जल निकास वाली, जीवाष्म युक्त बलुई दोमट या दोमट मृदा, जिसका pH मान 6.0-7.0 के मध्य हो,में टमाटर की खेती सफलता पूर्वक की जा सकती है। तैयार पौध की रोपाई से पहले, प्रक्षेत्र की गहरी जुताई मिट्टी पलट हल से करें, इसके बाद कल्टीवेटर से 3-4 बार आड़ी-तिरछी जुताई करके मिट्टी को भुर-भुरी व समतल बना लेना चाहिए।

उन्नतशील संकुल प्रजाति

स्वर्णा नवीनः इस प्रजाति की बुवाई जुलाई से सितम्बर एवं अप्रैल से मई माह में की जा सकती है, जिसकी उपज क्षमता 600-650 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। यह प्रजाति जीवाणु जनित उकठा व्याधि के प्रति सहनशील है।

स्वर्णा लालीमाः इस प्रजाति की बुवाई जुलाई से सितम्बर एवं फरवरी से अप्रैल माह में की जा सकती है, जिसकी उपज क्षमता 600-700 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। यह प्रजाति भी जीवाणु जनित उकठा व्याधि के प्रति सहनशील होती है।

काशी अमनः इस प्रजाति की उपज क्षमता 500-600 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। यह प्रजाति विषाणु जनित पर्ण कुंचन व्याधि के प्रति सहनशील है।

काशी विशेषः इस प्रजाति की उपज क्षमता 450-600 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। यह प्रजाति भी विषाणु जनिक पर्ण कुंचन व्याधि के प्रति सहनशील होती है।

उन्नत शील संकर प्रजाति

स्वर्णा वैभव (F_1): इस प्रजाति की बुवाई सितम्बर से अक्टूबर माह में की जा सकती है, जिसकी उपज क्षमता 900-1000 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है।

स्वर्णा सम्पदा (F_1): इस प्रजाति की बुवाई अगस्त-सितम्बर एवं फरवरी-मई माह में की जा सकती है, जिसकी उपज क्षमता 1000-1500 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। यह प्रजाति जीवाणु जनित उकठा व्याधि के प्रति सहनशील है।

काशी अभिमानः यह दूरस्थ विपणन के लिए सबसे उपयुक्त संकर प्रजाति है। इसकी उपज क्षमता 750-800 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। यह प्रजाति विषाणु जनित पर्ण कुंचन व्याधि के प्रति सहनशील है।

पोषक तत्व प्रबन्धन

फसल के पोषक तत्व प्रबन्धन हेतु खाद एवं उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण हमेशा मिट्टी जाँच के आधार पर करना लाभप्रद होता है। मृदा जाँच की सुविधा उपलब्ध नहीं होने की स्थिति में समान्यतया 200-250 कुन्तल सड़ी हुई गोबर की कम्पोस्ट खाद के साथ 100-150 किलोग्राम नत्रजन, 60-80 किलोग्राम स्फुर एवं 50-60 किलोग्राम पोटाश का उपयोग किया जाना चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई तथा स्फुर व पोटाश की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई से पूर्व मृदा में उपयोग करें। नत्रजन की शेष मात्रा को दो बराबर भागों में विभाजित कर के रोपाई के क्रमशः 25-30 एवं 45-50 दिनों बाद खड़ी फसल में टाप ड्रेसिंग के रूप में उपयोग किया जाना चाहिए।

बीज एवं बुआई के समय का प्रबन्धन

एक हेक्टेयर प्रक्षेत्र की रोपाई के लिए संकुल एवं संकर किस्मो की क्रमशः 350-400 ग्राम एवं 200-250 ग्राम स्वस्थ बीज की आवश्यकता पड़ती है। वैसे तो टमाटर की खेती पूरे वर्ष भर सफलतापूर्वक की जा सकती है। शरद कालीन फसल के लिए जुलाई-सितम्बर, बसंत या ग्रीष्मकालीन फसल के लिए नवम्बर-दिसम्बर तथा पहाड़ी क्षेत्रों में मार्च-अप्रैल महीनों में बीज की बुआई करना लाभप्रद पाया गया है।

पौधशाला एवं इसका प्रबन्धन

पौधशाला के लिए जीवांशयुक्त बलुई दोमट मृदा की आवश्यकता होती है। स्वस्थ एवं मजबूत पौध तैयार करने के लिए 10 ग्राम डाई-अमोनियमफास्फेट और 1.5-2.0 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति वर्ग मीटर की दर से अनुप्रयोग किया जाना चाहिए। पौधशाला के बेड की लम्बाई लगभग 3.0 मीटर, चौडाई लगभग 1.0 मीटर तथा भूमि की सतह से ऊँचाई कम से कम 25-30 सेंटीमीटर रखना उचित माना जाता है। इस प्रकार की ऊँची क्यारियों में बीज की बुआई पंक्तियों में करना चाहिए, जिनकी आपस में दूरी 5.0-6.0 सेंटीमीटर रखना चाहिए, जबकि पौध से पौध की दूरी 2.0-3.0 सेंटीमीटर रखना चाहिए। बुआई के बाद क्यारियों को सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट से ढक देना चाहिए। इसके बाद हजारे से हल्की सिचाई करके क्यारियों को घास-फूस या सरकंडे के आवरण से ढाक देना चाहिए। समय-समय पर आवश्यकतानुसार हल्की सिचाई करते रहें। बुआई के 20-25 दिनों पश्चात पौध रोपाई योग्य तैयार हो जाती है।

पौध की रोपाई

जब पौध 4-6 पत्तियों का हो जाय अथवा इसकी ऊँचाई लगभग 20-25 सेंटीमीटर हो जाय, तब इस प्रकार की पौध रोपाई के लिए तैयार समझना चाहिए। रोपाई के 3-4 दिनों पूर्व पौधशाला की सिचाई बन्द कर देनी चाहिए। जाड़ें के मौसम में पौध को पाला (Frost) से बचाने के लिए क्यारियों को पॉलीथीन के चादर से बनी टनल बनाकर ऊपर से ढक देना चाहिए। पंक्ति से पंक्ति एवं पौध से पौध की दूरी फसल की किस्म, मृदा की उर्वरता, रोपाई के मौसम एवं क्षेत्र विशेष को ध्यान में रख कर करना हितकर होता है, जिसका विवरण इस प्रकार हैः

क्षेत्र/मौसम	बुआई का समय	रोपाई का समय	दूरी (पंक्ति X पौध)	
			सीमित बढवार	असीमित बढवार
मैदानी/शरदकालीन	जुलाई-सितम्बर	अगस्त-अक्टूबर	60 से.मी. X 60 से.मी.)	60 से.मी. X 60 से.मी.)
वसंत एवं ग्रीष्मकालीन	नवंबर-दिसंबर	दिसंबर-जनवरी	60 से.मी. X 60 से.मी.)	60 से.मी. X 60 से.मी.)
पहाड़ी	मार्च-अप्रैल	अप्रैल-मई	60 से.मी. X 60 से.मी.)	60 से.मी. X 60 से.मी.)

सिचाई जल प्रबन्धन

पौध रोपण के ठीक बाद एवं प्रारम्भ के 3-4 दिनों तक पौधों को हजारे से पानी देना चाहिए। इसके बाद जब पौध मृदा में स्थापित हो जाय तब क्यारी या नाली जो भी हो उसमें पानी

दिया जाना चाहिए। अच्छा होता है, यदि मेड अथवा बेड एवं नाली बना कर पौध लगाया जाय। क्योंकि इस विधि में सिचाई जल एवं स्थान का भरपूर उपयोग हो जाता है। शरदकालीन फसलों में 10-15 दिनों के अन्तराल पर जबकि ग्रीष्मकालीन फसलों को 6-8 दिनों के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार सिचाई करना चाहिए। फसल में अधिक पानी लगने से पौधों में उकठा एवं विषाणु जनित पत्ती सिकुड़न व्याधि की सम्भावना बढ़ जाती है।

खरपतवार प्रबन्धन

खेतों में उगने वाले खरपतवारों को ससमय खुरपी या कुदाल से निराई-गुड़ाई करके निकाल लेना आर्थिक रूप से लाभदायक होता है। अन्यथा खरपतवारों की तेज वृद्धि से फसल के अधिकतम क्षति की सम्भावना बनी रहती है। फसल से अच्छी पैदावार लेने के लिए पौधों के जड़ के पास मिट्टी अवश्य चढ़ा दें, जिससे पौधों के बढवार पर अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। असीमित बढ़वार वाली प्रजातियों के पौधों को लकड़ी गाड़ कर सहारा देने से भी उपज पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है, साथ ही फल का मिट्टी से संपर्क न होने से विभिन्न रोगों का कुप्रभाव स्वतः कम हो जाता है। जिन क्षेत्रों में दीमक की समस्या नहीं हो, वहाँ सूखे घास–फूस की पलवार (Mulch) पौधों के नीचे बिछाने से भी खरपतवार कम उगते है, साथ मृदा नमी भी संरक्षित रहती है। इसके अतिरिक्त पौधो के जड़ क्षेत्र में समुचित सूक्ष्म-वातावरण के निर्माण से पौध का विकास अच्छा होता है।

एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन

टमाटर की फसल में खरपतवारों के अतिरिक्त ढ़ेर सारे नाशीजीवों जैसेः कवक, जीवाणु, विषाणु, सूत्रकृमी एवं विभिन्न प्रकार हानिकारक कीटों का प्रकोप देखने को मिलता है। सभी हानिकारक नाशीजीव फसल के उत्पादन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव डालते है। अतः फसल की परिस्थियों के अनुरूप इनका प्रबन्धन इसप्रकार किया जा सकता हैः

फसल की वानस्पतिक वृद्धि की अवस्था

- खेत को खरपतवार से मुक्त रखें, जिसके लिए रोपाई के क्रमशः 15 एवं 30 दिनों बाद एक-एक निराई एवं गुडाई अवश्य सुनिश्चित करें।
- आवश्यकतानुसार हल्की सिचाई करें, ध्यान इस बात का रखें कि जल जमाव की स्थिति न बने।
- खेतों की निगरानी निश्चित अन्तराल पर करते रहे तथा रोग ग्रसित पौधों को उखाड़ कर मिट्टी में दबा दें। यदि कोई असमान्य पौधा दिखे तो विशेषज्ञ (जिला के कृषि विज्ञान केन्द्र, जिला एवं प्रखंड स्तरीय कृषि पदाधिकारी या इनके प्रतिनिधि) से परामर्श अवश्य ले।
- सफेद मक्खी के प्रकोप को कम करने के पीला चिपचिपा ट्रैप या कार्ड @ 10 प्रति एकड़ की दर से लगाना चाहिए।
- फसलीय पर्यावरण में नाशीजीवों के प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या बढ़ाने के उद्धेश्य से बर्ड पर्चर @ 20 प्रति एकड़ की दर से लगाया जा सकता है। साथ ही साथ अण्डपरजीवी जैसे- ट्राईकोग्रामा स्पेसीज @ 20,000 अण्डा प्रति एकड़ प्रति सप्ताह की दर से कम से कम 4 बार खेत में छोड़ना चाहिए।
- यदि फसल की निगरानी के समय, यह अनुभव हो कि अमूक कीट या रोग कारक जीव अपने आर्थिक क्षति पर पहुँचाने वाला है साथ ही इनके प्राकृतिक शत्रुओं की क्रियाशीलता सामान्य से कम हो, तो विशेषज्ञ (जिला के कृषि विज्ञान केन्द्र, जिला एवं प्रखंड स्तरीय कृषि पदाधिकारी या इनके प्रतिनिधि) से परामर्श लेकर इन नाशीजीवों की संख्या कम करने के लिए रसायनों का आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जा सकता है। कुछ सामान्य संस्तुतियाँ इस प्रकार हैः
- नीम के बीज का सत (NSKE) का 5 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें, जिससे पौधों के सतह रहने वाले कीटो एवं रोग कारको की क्रियाशीलता में कमी आयेगी।
- अगेती एवं पछेती झुलसा व्याधि के प्रबन्धन के लिए ग्रसित पौधों को उखाड कर नष्ट कर दें, साथ ही साथ मेन्कोजेब 75 डब्लू.पी. @ 600-800 ग्राम या फमोक्साडोन 16.6 एस.सी + सायमोक्सानिल 22.1 एस.सी. @ 200 ग्राम या कॉपर ओक्सी क्लोराइड 50 डब्लू.पी. @ 1000 ग्राम को 150-200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।
- टमाटर के पर्णकुंचन (पत्ती सिकुड़न) व्याधि के प्रबन्धन के लिए सर्वप्रथम व्याधि ग्रसित पौधों को जड़ से उखाड़ कर मिट्टी में दबा दे। तत्पश्चात डाइमेथोएट 30 इ.सी. @ 400 मिली लीटर या इमिडाक्लोप्रीड 17.8 एस.एल. @ 60-70 मिली लीटर या थियामेथोक्जाम 25 डब्लू.जी. @ 80 ग्राम को 150-200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव सुनिश्चित करें।

फसल की पुष्पन एवं फलन की अवस्था

- फसल की इस अवस्था में शेष बचे हुए खरपतवारों को हाथ से निकाल लेना चाहिए, क्योंकि इस समय के बचे हुए खरपतवार से उत्पन्न बीज आने वाली फसल के लिए हानिकारक

ISSN No. 2583-3316

सिद्ध हो सकता है।

♦ फल को मिट्टी के सम्पर्क में आने से बचाने के लिए, पौधों को चारो तरफ से सहारा देने की आवश्यकता होती है, जिससे फल सड़न की समस्या कम होती है।

♦ फली छेदक कीट के प्रबंधन के लिए एच.ए. एन.पी.वी. 0.43 ए.एस. @ 600 मिली लीटर या *बैसिलस थुरिनजिएन्सिस* @ 400-500 ग्राम की दर से 150-200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव किया जा सकता है।

♦ फल छेदक कीट की संख्या यदि आर्थिक क्षति स्तर पर पहुँचने की सम्भावना हो तो इनडोक्साकार्ब 14.5 एस.सी. @ 160-200 मिली लीटर या फ्लूवेन्डामाइड 20 डब्लू.जी. @ 40 ग्राम या नुवाल्यूरोन 10 ई.सी. @ 300 मिली लीटर या क्लोरेनट्रानिलिप्रोले 18.5 एस.सी. @ 60 मिली लीटर को 150-200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

फलों की तुड़ाई

टमाटर के फलों की तुड़ाई का समय उसके उपयोग तथा बाजार की दूरी पर निर्भर करती है। यदि आस-पास के बाजार में बेचना हो तो फल पकने के बाद तुड़ाई करें। यदि दूर के बाजार में भेजना हो तो जैसे ही फल के रंग में परिवर्तन होना शुरू हो तो तुड़ाई कर लेना चाहिए।

उपज एवं भण्डारण

टमाटर की उपज, प्रजाति, बुवाई की विधि एवं समय, खाद एवं उर्वरक की मात्रा, मौसम, फसल प्रबन्धन आदि पर निर्भर करती है। इस फसल की औसत उपज 300-350 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होती है। अच्छी उत्पादन तकनीकी एवं उन्नत प्रजाति अपनाने से 800-1000 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। बाजार में माँग कम होने पर टमाटर को कुछ दिनों तक भण्डारित भी किया जा सकता है, जैसेः अपरिपक्व हरे फल को 12.5^{o}सेल्सियस तापमान पर 30 दिनों तक जबकि परिपक्व फल को 4-5^{o}सेल्सियस तापमान पर 10 दिनों तक रखा जा सकता है। उपरोक्त भण्डारण के समय सापेक्षिक आर्द्रता लगभग 85-90 प्रतिशत होनी चाहिए।

निष्कर्ष

इस प्रकार यदि किसान भाई उन्नत वैज्ञानिक पद्धति अपनाकर टमाटर की खेती करें साथ ही ऊपर बाताये गए सावधानियों का समय रहते अनुपालन करें तथा समय-समय पर विशेषज्ञों से सलाह-मशविरा करते रहे तो टमाटर की खेत से अधिकतम आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते है। साथ अपने सम्पूर्ण परिवार को सुरक्षित एवं पौष्टिक सब्जी भी उपलब्ध करा सकते है, जो आज के परिपेक्ष्य में बहुत ही आवश्यक है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

बैंगन फसल में रोगो की पहचान, प्रभाव एवं नियंत्रण की विधियाँ

आर्यन सिंह, शोभित यादव, अनमोल चौरसिया, अशोक कुमार एवं सुनील कुमार*

पादप सुरक्षा विभाग, बाँदा कृषि एवं प्रोद्यौगिक विश्वविद्यालय, बाँदा, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: drsunilk81@gmail.com

परिचय

भारत में बैंगन की खेती का महत्व किसी से छुपा नहीं है। यह सब्जी देश के हर कोने में उगाई जाती है और इसकी खपत भी बहुत अधिक होती है। बैंगन की फसल अच्छी उपज लेने के लिए किसानों को कई प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिनमें रोग जनकों (फँफूदीं, जीवाणु, विषाणु) से होने वाले रोग प्रमुख हैं। यदि इन रोगों की समय रहते पहचान और नियंत्रण न किया जाए, तो फसल की गुणवत्ता और उत्पादन दोनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस लेख में हम बैंगन की फसल में पायें जाने वाले प्रमुख रोगों, उनके लक्षण, प्रभाव और नियंत्रण की विधियों पर विस्तार से चर्चा करेंगे। लेख को पढ़कर किसान भाई न केवल रोगों की पहचान कर सकेंगे, बल्कि समय रहते उचित प्रबंधन भी कर पाएंगे।

बैंगन फसल में रोग जनकों से होने वाले प्रमुख रोग

क) आर्द्र गलन (डैम्पिंग ऑफ)

आर्द्र गलन रोग मुख्यतः पीथियम अफेनिडर्मेटम, राइजोक्टोनिया सोलानी तथा फाइटोफ्थोरा प्रजाति के कवकों द्वारा होता है। यह रोग प्रायः पौधशाला में उगने वाले छोटे पौधों को प्रभावित करता है।

लक्षण

1. बीज के अंकुरण से पहले या तुरंत बाद पौधे मर जाते हैं।
2. भूमि के सम्पर्क मे आने वाले तने के हिस्से में पीले-हरे रंग के धब्बे बनते हैं।
3. पौधशाला में पत्तियों का मुरझाना और बाद में सूख जाना प्रमुख लक्षण है।
4. तना पतला और मुलायम हो जाता है, जिससे पौधे गिर जाते है।

प्रभाव

इस रोग के कारण पौधशाला में पौधों की भारी हानि होती है। यदि समय रहते नियंत्रण नही किया गया, तो रोपाई के लिए पर्याप्त पौधे उपलब्ध नहीं हो पाते हैं, जिससे मुख्य खेत में फसल की संख्या कम हो जाती है।

नियंत्रण की विधियाँ

1. **बीजोपचारः** बुवाई से पूर्व बीजों को थिरम या कैप्टान नामक कवक नाशी की 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें।
2. **गरम पानी से उपचारः** बीजों को 50 डिग्री सेल्सियस तापमान के गरम पानी में 30 मिनट तक डुबोकर बोयें।
3. **पौधशाला का चयनः** उचित जल निकास पौधशाला युक्त भूमि पर कम से कम 10-15 सेंटीमीटर ऊँचाई वाली क्यारी बनायें।
4. **रोगग्रस्त पौधों का निष्कासनः** पौधशाला में रोगग्रस्त पौधों को निकालकर नष्ट कर दें।
5. **रासायनिक छिड़कावः** खड़ी फसल में बोर्डो मिश्रण 0.8 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
6. **जैविक नियंत्रणः** *ट्राइकोडर्मा विरिडी* 4.0ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से बीजोपचार करें या 2.5किलोग्राम *ट्राइकोडर्मा विरिडी* को 100 किलोग्राम गोबर की खाद या वर्मीकम्पोस्ट के साथ मिलाकर खेत में डालें।

ख) फोमोप्सिस झुलसा एवं फल सड़न रोग

यह रोग *फोमोप्सिस वेक्सैन्स* नामक कवक के कारण होता है। यह बैंगन की फसल का एक अत्यंत हानिकारक रोग है, जो पत्तियों, तनों और फलों को प्रभावित करता है।

लक्षण

1. पत्तियों पर छोटे-छोटे गोल भूरे रंग के धब्बे बनते हैं, जो बाद में अनियमित आकार के काले धब्बों में बदल जाते हैं।
2. रोगी पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती हैं।
3. फलों पर धूल के कणों के समान भूरे रंग के धब्बे दिखाई

ISSN No. 2583-3316

देते हैं, जो बढ़कर काले धब्बों में परिवर्तित हो जाते हैं।

4. संक्रमित फल सड़ने लगते हैं और जमीन पर गिर जाते हैं।

5. पौधशाला में भी यह रोग झुलसा के रूप में दिखाई देता है।

प्रभाव

इस रोग के कारण फलों की गुणवत्ता और उत्पादन दोनों में भारी गिरावट आती है। रोग का प्रकोप अधिक होने पर उपज में 50 प्रतिशत तक की हानि हो सकती है।

नियंत्रण की विधियाँ

1. बीजोपचारः बुवाई से पूर्व बीजों को बाविस्टिन (2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) या कैप्टान (2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से उपचारित करें।

2. रोगग्रस्त पौधों का निष्कासनः संक्रमित पौधों और फलों को खेत से निकाल कर जला दें।

3. रासायनिक छिड़कावः फसल पर 0.2 प्रतिशत कैप्टान या जिनेब 0.2 प्रतिशत का 7-10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

4. प्रतिरोधी किस्मों का चयनः पूसा भैरव और फ्लोरिडा मार्केट जैसी रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें।

5. फसल चक्रः तीन वर्ष तक गैर-सोलेनेसी फसलें बोकर फसल चक्र अपनाएं।

6. गर्म पानी से बीज उपचारः बीजों को 50 डिग्री सेल्सियस तापमान के गर्म पानी में 30 मिनट तक डुबोकर बोयें।

ग) पत्ती धब्बा रोग (लीफ स्पॉट्स)

यह रोग मुख्यतः चार प्रकार की कवक प्रजातियों द्वारा फैलता हैः इस रोग का अधिक प्रभाव पत्तियों पर होता है।

1. *अल्टरनेरिया मेलोंगिनी*
2. *अल्टरनेरिया सोलेनाई*
3. *सर्कोस्पोरा सोलेनाई-मेलोंगिनी*
4. *सर्कोस्पोरा सोलेनाई*

लक्षण

1. पत्तियों पर अनियमित आकार के भूरे या मट-मैले धब्बे बनते हैं।

2. धब्बे आपस में मिलकर बड़े विक्रत का रूप ले लेते हैं।

3. गंभीर संक्रमण में पत्तियां सूख कर गिर जाती हैं।

4. अल्टरनेरिया के कारण फलों पर भी गहरे धब्बे बनते हैं, जिससे फल पीले पड़ जाते हैं और पकने से पहले ही गिर जाते हैं।

5. सर्कोस्पोरा के कारण पत्तियों में कोणीय से अनियमित आकार के धब्बे बनते हैं, जो बाद में मटमैले भूरे रंग के हो जाते हैं।

प्रभाव

इस रोग के कारण पत्तियों का झड़ना, फलों का आकार छोटा रह जाना और उपज में भारी कमी आना सामान्य है। गंभीर प्रकोप में फसल की 30-40 प्रतिशत तक हानि हो सकती है।

नियंत्रण विधियां

1. खरपतवार नियंत्रणः खेत में खरपतवारों की नियमित सफाई करें।

2. रोगग्रस्त पत्तियों का निष्कासनः संक्रमित पत्तियों को तोड़कर जला दें।

3. रासायनिक छिड़कावः बाविस्टिन (0.1 प्रतिशत), क्लोरोथैलोनिल (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) या जिनेब (2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें।

4. प्रतिरोधी किस्मों का चयनः 'पंत सम्राट' जैसी प्रतिरोधी किस्में लगायें।

5. फसल चक्रः फसल चक्र अपनाकर रोग का प्रकोप कम करें।

घ) वर्टिसिलियम विल्ट

यह रोग *वर्टिसिलियम डाल्हि* नामक कवक के कारण होता है। यह रोग पौधों की जड़ों के माध्यम से प्रवेश करता है और वाहिका तंत्र को प्रभावित करता है।

लक्षण

1. संक्रमित पौधे बौने रह जाते हैं और उनकी वृद्धि रुक जाती है।

2. पत्तियों पर अनियमित रूप से बिखरे हुए हल्के पीले धब्बे बनते हैं।

3. पत्तियाँ मुरझा कर सूख जाती हैं।

4. तने को चीरने पर वाहिका तंत्र में गहरे भूरे रंग का मलिनीकरण दिखाई देता है।

5. गंभीर संक्रमण में पौधे फूल और फल नहीं बना पाते या विकृत फल बनते हैं।

प्रभाव

इस रोग के कारण पौधों की वृद्धि रुक जाती है, फूल और फल नहीं बनते, जिससे उपज में भारी गिरावट आती है। रोग का प्रकोप अधिक होने पर खेत में 40प्रतिशत तक पौधे नष्ट हो सकते हैं।

नियंत्रण विधियाँ

1. फसल चक्रः भिंडी, टमाटर, आलू जैसी सोलनेसी फसलों के साथ फसल चक्र न अपनाएं।

2. रासायनिक नियंत्रणः बेनलेट (0.1 प्रतिशत) या बोर्डो मिश्रण (2 प्रतिशत) का छिड़काव करें।

3. प्रतिरोधी किस्मों का चयनः 'पंत सम्राट', 'अर्का निधि', 'अर्का नीलकंठ', 'सूर्या' जैसी प्रतिरोधी किस्में लगायें।

4. रोगग्रस्त पौधों का निष्कासन: संक्रमित पौधों को खेत से निकाल कर जला दें।

5. जैविक नियंत्रण: *ट्राइकोडर्मा विरिडी* को 100 किलोग्राम गोबर की खाद या वर्मीकम्पोस्ट के साथ मिलाकर खेत में प्रयोग करें।

ङ) जीवाणु उकठा (बैक्टीरियल विल्ट)

यह रोग *राल्स्टोनिया सोलेनेसिएरम* नामक जीवाणु के कारण होता है। यह मिट्टी में लंबे समय तक जीवित रह सकता है और पौधों की जड़ों के माध्यम से प्रवेश करता है।

लक्षण

1. पत्तियाँ अचानक पीली पड़ कर मुरझा जाती हैं।
2. कभी-कभी पूरी शाखा या पूरा पौधा सूख जाता है।
3. तने को काटने पर वाहिका तंत्र में पीला-भूरा मलिनीकरण दिखाई देता है।
4. तने को पानी में डुबोने पर सफेद रंग का जीवाणु स्त्राव निकलता है।

प्रभाव

जीवाणु उकठा के कारण पौधे अचानक सूख जाते हैं, जिससे उपज में भारी गिरावट आती है। यह रोग विशेष कर गर्म और आर्द्र मौसम में अधिक फैलता है।

नियंत्रण विधियाँ

1. रोगग्रस्त पौधों का निष्कासन: संक्रमित पौधों को खेत से निकाल कर जला दें।

2. प्रतिरोधी किस्मों का चयन: रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें।

3. फसल चक्र: भिंडी, टमाटर, आलू जैसी सोलनसी फसलों के साथ फसल चक्र न अपनायें।

4. बीज उपचार: बुवाई से पूर्व बीजों को स्ट्रप्टोसाइक्लिन (1 ग्राम/40 लीटर पानी) के घोल में 30 मिनट तक डुबो कर बोयें।

5. खेत की सफाई: खेत को साफ-सुथरा रखें और संक्रमित अवशेषों को नष्ट करें।

च) छोटी पत्ती रोग (लिटिल लीफ)

यह रोग *फाइटोप्लाज्मा* (जीवाणु जनित) के कारण होता है, जो मुख्यतः लीफ हॉपर नामक रस चूसक कीट द्वारा फैलता है।

लक्षण

1. पत्तियाँ आकार में छोटी और पतली हो जाती हैं।
2. पौधा बौना और झाड़ीदार हो जाता है।
3. डंठल छोटा हो जाता है और पत्तियाँ आपस में सटी रहती हैं।
4. फूल और फल नहीं बनते, या बने भी तो कठोर और अविकसित रहते हैं।
5. पौधे की वृद्धि रुक जाती है।

प्रभाव

इस रोग के कारण पौधे पूरी तरह से बौने रह जाते हैं और फलन नहीं होता, जिससे उपज शून्य हो जाती है। रोग का प्रकोप अधिक होने पर खेत की पूरी फसल नष्ट हो सकती है।

नियंत्रण विधियाँ

1. रोगग्रस्त पौधों का निष्कासन: प्रारंभिक अवस्था में ही संक्रमित पौधों को खेत से निकाल कर जला दें।

2. प्रतिरोधी किस्मों का चयन: 'पूसा पर्पल राउंड', 'पूसा पर्पल लॉन्ग' जैसी प्रतिरोधी किस्में लगायें।

3. बीज और पौधों का उपचार: बीज और पौधों को टेट्रासाइक्लिन (500 मिलीग्राम प्रति लीटर पानी) के घोल में 30 मिनट तक डुबोकर लगायें।

4. खेत की गहरी जुताई: खेत खाली होने पर गहरी जुताई करें।

5. फसल चक्र: फसल चक्र अपनायें और सोलनसी परिवार की फसलें लगातार न बोयें।

6. जैविक नियंत्रण: *स्यूडोमोनास फ्लोरीसेन्स* का प्रयोग करें।

छ) मोजेक रोग

रोग का कारण

यह रोग मुख्यत: आलू वायरस वाई (*पोटैटो वायरस वाई*) के कारण होता है, जो माहू (एफिड) द्वारा फैलता है।

लक्षण

1. पत्तियों पर पीले-हरे रंग की पच्चीकारी (मोजेक) बन जाती है।
2. पत्तियाँ छोटी, कठोर और विकृत हो जाती हैं।
3. पौधे की वृद्धि रुक जाती है।
4. गंभीर संक्रमण में पौधे बौने रह जाते हैं और फलन नहीं होता।

प्रभाव

मोजेक रोग के कारण पौधों की वृद्धि रुक जाती है, पत्तियाँ विकृत हो जाती हैं और उपज में भारी गिरावट आती है।

नियंत्रण विधियाँ

1. रोगग्रस्त पौधों का निष्कासन: संक्रमित पौधों को खेत से निकाल कर जला दें।

2. खरपतवार नियंत्रण: खेत में खरपतवारों की सफाई करें, जो वायरस के वाहक हो सकते हैं।

3. प्रतिरोधी किस्मों का चयन: रोग प्रतिरोधी किस्में लगायें।

4. फसल चक्र: फसल चक्र अपनाएं।

5. बीज उपचार: बीजों को स्वस्थ पौधों से लें और बुवाई

से पूर्व उपचारित करें।

रोग नियंत्रण के सामान्य उपाय

1. **स्वस्थ बीजों का चयनः** हमेशा स्वस्थ और प्रमाणित बीजों का ही चयन करें।

2. **बीजोपचारः** बुवाई से पूर्व बीजों को अनुशंसित कवक नाशी या जीवाणु नाशी से उपचारित करें।

3. **फसल चक्रः** एक ही खेत में लगातार सोलनेसी परिवार की फसलें न बोयें।

4. **खेत की सफाईः** पुराने फसल अवशेषों, खरपतवारों और संक्रमित पौधों को समय-समय पर नष्ट करें।

5. **जल निकास व्यवस्था:** खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था रखें, ताकि अधिक नमी के कारण रोग जनकों का विकास न हो।

6. **जैविक नियंत्रणः** ट्राइकोडर्मा, नीम की खली, सड़ी-गली गोबर खाद आदि का प्रयोग करें।

7. **रासायनिक नियंत्रणः** अनुशंसित मात्रा में ही रसायनों का प्रयोग करें और छिड़काव के समय सुरक्षा निर्देशों का पालन करें।

8. **प्रतिरोधी किस्मों का चयनः** रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन कर फसल लगायें, जिससे रोगों का प्रकोप कम हो सके।

निष्कर्ष

बैंगन की फसल में रोगजनकों से होने वाले रोगों की समय रहते पहचान और उचित नियंत्रण अत्यन्त आवश्यक है। किसान भाइयों को चाहिए कि वे रोगों के लक्षणों को समझें, समय पर उचित व व्यवहारिक प्रबंधन अपनायें और स्वस्थ फसल उत्पादन सुनिश्चित करें। जैविक और रासायनिक दोनों प्रकार की नियंत्रण विधियों का संतुलित उपयोग, खेत की सफाई, फसल चक्र और प्रतिरोधी किस्मों का चयन सभी उपाय मिलकर बैंगन की फसल को रोगमुक्त और अधिक उत्पादन देने वाली बना सकते हैं। यदि किसान इन उपायों को अपनाते हैं, तो न केवल उनकी आय में वृद्धि होगी, बल्कि उपभोक्ताओं को भी गुणवत्तापूर्ण बैंगन उपलब्ध हो सकेगा।

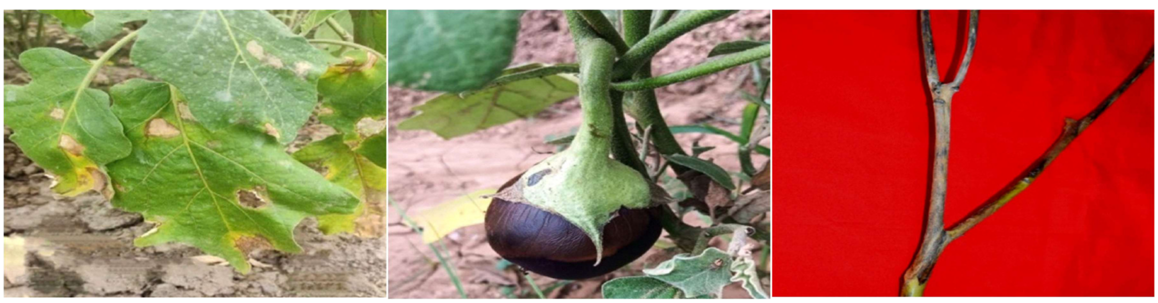

फोमोप्सिस झुलसा

छोटी पत्ती रोग (लिटिल लीफ)

पत्ती धब्बा रोग

❖❖

ISSN No. 2583-3316

जलवायु परिवर्तन का उत्तर प्रदेश के सब्जी उत्पादन पर प्रभावः रोग प्रबंधन और समाधान

सुनील कुमार*, प्रद्युम्न कुमार सिंह, अशोक कुमार, आर्यन सिंह एवं शोभित यादव

पादप सुरक्षा विभाग, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बाँदा, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ताः sksunilphd@gmail.com

परिचय

उत्तर प्रदेश, जो देश की कृषि व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है, भारत के कुल सब्जी उत्पादन में लगभग 15 प्रतिशत का योगदान देता है। राज्य में आलू, टमाटर, बैंगन, भिंडी, गोभी और मिर्च जैसी सब्जी फसलें बड़े पैमाने पर उगायी जाती हैं, जो न केवल राज्य की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करती हैं बल्कि देश की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। हालांकि, बीते दो दशकों में जलवायु परिस्थितियों में आए तीव्र बदलावों ने प्रदेश की पारंपरिक कृषि पद्धतियों पर प्रतिकूल असर डाला है। तापमान में निरंतर वृद्धि, वर्षा के असमान वितरण और आर्द्रता में अनिश्चितता ने सब्जी फसलों पर गंभीर प्रभाव डाला है। इन बदलावों के कारण न केवल रोगों की आवृत्ति और प्रकार में बदलाव आया है, बल्कि उनकी तीव्रता और प्रसार की दर में भी वृद्धि हुई है। कई परंपरागत रोग जो पहले सीमित क्षेत्रों तक सीमित थे, अब व्यापक स्तर पर दिखाई देने लगे हैं। इसके अलावा, कुछ नए रोग भी सामने आए हैं जिनका निदान करना किसानों के लिए चुनौतीपूर्ण बन गया है। ऐसे परिवर्तनों के परिप्रेक्ष्य में, उत्तर प्रदेश की कृषि व्यवस्था के लिए रोग प्रबंधन की रणनीतियों में बदलाव अत्यंत आवश्यक हो गया है। इस लेख में, राज्य के विशेष परिप्रेक्ष्य में जलवायु परिवर्तन और सब्जी फसलों में रोग प्रकोप के बीच के संबंधों की पड़ताल की गई है। साथ ही, यह लेख टिकाऊ कृषि और रोग प्रबंधन के ऐसे उपायों पर केंद्रित है, जो बदलती जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल हों और किसानों की आजीविका की सुरक्षा सुनिश्चित कर सकें।

उत्तर प्रदेश की कृषि पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

पिछले कई दशकों में उत्तर प्रदेश की कृषि व्यवस्था पर जलवायु परिवर्तन के गहरे और बहुआयामी प्रभाव देखने को मिले हैं। जलवायु से जुड़ी प्रमुख घटनाओं में तापमान में वृद्धि, वर्षा की अनियमितता, आर्द्रता में बदलाव और कोहरे की स्थिति में वृद्धि शामिल हैं, जो कृषि उत्पादन और रोग नियंत्रण की दृष्टि से अत्यंत चुनौतीपूर्ण राज्य बन चुके हैं।

क) तापमान में परिवर्तन

1990 से 2023 के बीच राज्य में औसत वार्षिक तापमान में लगभग 0.8 से 1.2 डिग्री सेन्टीग्रेट तक की बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है। यह वृद्धि गर्मी के महीनों में अधिक स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रही है, जहाँ तापमान 45 डिग्री सेन्टीग्रेट से ऊपर जाने लगा है। उदाहरण स्वरूप, वर्ष 2022 में बुंदेलखंड क्षेत्र में पारा 47 डिग्री सेन्टीग्रेट तक पहुँच गया था। इसके विपरीत, शीतकालीन तापमान में गिरावट के बजाय उतार-चढ़ाव की प्रवृत्ति सामने आई है। वर्ष 2023 में लखनऊ में दिसंबर माह का औसत न्यूनतम तापमान सामान्य से 4 डिग्री सेन्टीग्रेट और अधिकतम यानी लगभग 18 डिग्री सेन्टीग्रेट रहा, जो कि पारंपरिक सर्दियों के स्वरूप से भिन्न है। यह बदलाव फसलों की वृद्धि अवस्था और रोग के प्रकोप समय को प्रभावित करता है।

ख) वर्षा के स्वरूप में अस्थिरता

मानसून की चाल में अब स्पष्ट अनियमितता देखी जा रही है। न केवल मानसून की शुरुआत में देरी हो रही है, बल्कि उसकी समाप्ति भी अपेक्षा से पहले पहले या देर से हो रही है, जिससे फसल चक्र प्रभावित होता है। राज्य में अत्यधिक वर्षा की घटनाएँ बढ़ी हैं, जैसे 2021 में गोरखपुर में 24 घंटे के भीतर 200 मिमी से अधिक वर्षा हुई थी, जिससे बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हुई। वहीं, वर्ष 2010 से 2020 के बीच सूखा पड़ने की घटनाओं में लगभग 40प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस प्रकार, कभी अत्यधिक वर्षा तो कभी लंबे समय तक वर्षा न होने की स्थिति किसानों के लिए चिंता

ISSN No. 2583-3316

का कारण बन गई है।

ग) आर्द्रता और कोहरे की बढ़ती प्रवृत्ति

गर्मियों के महीनों में आर्द्रता का स्तर ८० से ९० प्रतिशत तक पहुँचने लगा है, जिससे फफूंदजनित रोग जैसे झुलसा, सड़न और अन्य कवकजनित संक्रमणों की तीव्रता बढ़ गई है। अधिक आर्द्रता बीज और पौध संरक्षण दोनों के लिए जोखिम पैदा करती है। वहीं, सर्दियों में कोहरे की अवधि में भी वृद्धि देखी गयी है, विशेषकर पूर्वी उत्तर प्रदेश में, जहाँ प्रति वर्ष १५ से २० दिन तक घना कोहरा रहने लगा है। यह स्थिति प्रकाश संश्लेषण में बाधा डालती है और पत्तियों पर नमी बनाए रखने के कारण कई रोगों को जन्म देती है।

इन जलवायु परिवर्तनों का सीधा प्रभाव राज्य की सब्जी उत्पादन प्रणाली पर भी पड़ रहा है, जिससे न केवल उत्पादन में गिरावट आ रही है, बल्कि रोगों की नई प्रकार की घटनाएँ भी सामने आ रही हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि उत्तर प्रदेश की कृषि को अब अधिक जलवायु-संवेदनशील और अनुकूलन शील रणनीतियों की आवश्यकता है, जिससे बदलते पर्यावरणीय परिदृश्य में टिकाऊ उत्पादन संभव हो सके।

कृषि पर जलवायु परिवर्तन के प्रत्यक्ष प्रभाव

उत्तर प्रदेश की कृषि जलवायु परिवर्तन के परिणाम स्वरूप अनेक प्रकार की प्रतिकूल स्थितियों का सामना कर रही है। इन परिवर्तनों का सीधा असर फसल चक्र, मिट्टी की गुणवत्ता और रोग जनकों के व्यवहार पर देखने को मिल रहा है, जिससे राज्य की पारंपरिक कृषि प्रणाली गहराई से प्रभावित हो रही है।

क) फसल चक्र में असंतुलन

जलवायु में आई अनिश्चितता और तापमान में तेजी से हो रहे बदलावों के कारण परंपरागत फसल चक्र अव्यवस्थित होता जा रहा है। विशेषकर गेहूं जैसी रबी फसल की बुवाई में होने वाली देरी का असर अगली फसल यानी सब्जियों की समय पर रोपाई पर पड़ता है। इसके चलते किसानों को फसल उत्पादन में न केवल समय की कमी झेलनी पड़ती है, बल्कि उत्पादन की मात्रा और गुणवत्ता पर भी विपरीत असर पड़ता है। इसके अलावा, लगातार बढ़ते तापमान ने गर्मी सहन करने वाली फसलों की किस्मों की मांग को भी बढ़ा दिया है, जिससे बीज चयन और रोपण समय में भी बदलाव आ रहा है।

ख) मृदा स्वास्थ्य में गिरावट

जलवायु परिवर्तन की वजह से बाढ़ और अत्यधिक वर्षा की घटनाएँ अधिक सामान्य हो गई हैं। इससे मिट्टी का कटाव बढ़ता है, जिससे सतही उपजाऊ परत नष्ट हो जाती है। इसके साथ ही मिट्टी में मौजूद जैविक पदार्थों की मात्रा भी घटने लगती है, जिससे उसकी उपजाऊ क्षमता कम होती है। वहीं, बढ़ते उत्पादन की आवश्यकता को पूरा करने के लिए किसान रासायनिक उर्वरकों का अधिक प्रयोग कर रहे हैं, जिससे मिट्टी का पीएच स्तर असंतुलित होता जा रहा है। यह असंतुलन पौधों की पोषक तत्वों को ग्रहण करने की क्षमता को प्रभावित करता है और दीर्घकालीन रूप से मिट्टी की उर्वरता को नुकसान पहुँचाता है।

ग) रोगजनकों में परिवर्तन और नई चुनौतियाँ

जलवायु में आ रही तीव्र गर्मी और बढ़ती आर्द्रता ने रोग फैलाने वाले सूक्ष्म जीवों, जैसे फफूंद और जीवाणुओं के व्यवहार में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन ला दिया है। बदलते पर्यावरणीय कारकों ने इन रोगजनकों के अधिक आक्रामक और सहनशील वेरिएंट को जन्म दिया है। उदाहरण स्वरूप, *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम* का अधिक उग्र और हानिकारक स्ट्रेन अब पहले की तुलना में अधिक तीव्रता से फैल रहा है, जिससे सब्जी की फसलों में रोग की आशंका कई गुना बढ़ गई है। इन नए प्रकार के रोगजनकों के कारण परंपरागत नियंत्रण उपाय अप्रभावी हो रहे हैं, जिससे किसानों के समक्ष रोग प्रबंधन एक बड़ी चुनौती बनता जा रहा है।

इस प्रकार, जलवायु परिवर्तन की वजह से कृषि की प्रत्येक इकाई चाहे वह फसल का चक्र हो, मिट्टी की गुणवत्ता या रोग नियंत्रण सभी पर गंभीर असर पड़ रहा है। इससे न केवल उत्पादन लागत बढ़ रही है, बल्कि किसानों की आय और कृषि की स्थिरता भी संकट में पड़ गई है। आने वाले समय में इन समस्याओं का समाधान स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विकसित की गई अनुकूलन रणनीतियों और वैज्ञानिक हस्तक्षेपों से ही संभव हो पाएगा।

सब्जी रोगों का बदलता परिदृश्य

जलवायु परिवर्तन के कारण राज्य में सब्जियों में न केवल पूर्व से मौजूद रोगों की तीव्रता बढ़ी है, बल्कि कुछ नए रोग भी उभर कर सामने आए हैं। तापमान और आर्द्रता में परिवर्तन ने फफूंद, जीवाणु और वायरस जनित रोगों के प्रसार को नयी दिशा दी है।

क) फफूदजनित रोग

पछेती झुलसा रोगः यह मुख्यतः आलू और टमाटर को प्रभावित करता है। पत्तियों पर काले धब्बे व तनों का सड़ना इसके सामान्य लक्षण हैं। यह रोग प्रायः उस समय तेजी से फैलता है जब तापमान १८ से २२ डिग्री सेल्सियस और आर्द्रता ९० प्रतिशत से अधिक हो। मेरठ और मुजफ्फरनगर

जैसे क्षेत्रों में इस रोग ने 2022 में आलू की 35 प्रतिशत तक फसल को नुकसान पहुँचाया।

चूर्णिल आसिता: कद्दू वर्गीय सब्जियाँ जैसे खीरा, कद्दू और तरबूज पर सफेद चूर्ण जैसा लेप इसकी पहचान है। 25-30 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान और कम वायु संचरण इसके फैलाव को बढ़ावा देता है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश जैसे सहारनपुर और बिजनौर में 2023 में इसका भारी प्रभाव देखा गया था।

ख) जीवाणुजनित रोग

- **बैक्टीरियल विल्ट:** टमाटर और बैंगन जैसी फसलों में पत्तियाँ पीली पड़ती हैं और तने से गाढ़ा तरल रिसता है। यह रोग उच्च तापमान (30 डिग्री सेंटीग्रेट) और अत्यधिक सिंचाई की स्थिति में फैलता है। कानपुर और फतेहपुर इसके प्रमुख प्रभावित क्षेत्र हैं।
- **काला धब्बा रोग (ब्लैक रॉट):** गोभी और फूलगोभी में "V" आकार के काले धब्बे इसका संकेत हैं। यह प्रायः बाढ़ के बाद गीली मिट्टी में फैलता है, विशेषतः वाराणसी और गाजीपुर में।

ग) विषाणुजनित रोग

- **पीत शिरा मरुजैक वायरस:** भिंडी और टमाटर पर इसका प्रभाव अधिक देखा जाता है। पत्तियाँ मुड़ जाती हैं और फल छोटे रह जाते हैं। यह रोग सफेद मक्खी (*बेमिसिया टैबैसी*) द्वारा फैलता है, जिसकी जनसंख्या गर्मियों में अत्यधिक बढ़ जाती है। लखनऊ और रायबरेली में इसकी व्यापकता दर्ज की गई है।
- **कुकुरबिट एफिड बोर्न यलो वायरस:** लौकी और करेला जैसी फसलों में पत्तियाँ पीली हो जाती हैं और फल कठोर हो जाते हैं। इसका फैलाव मॉहू (एफिड) नामक कीट द्वारा होता है।

घ) उभरते रोग

- **जड़ ग्रन्थि नेमाटोड:** मिर्च और टमाटर की जड़ों में गाँठें बनती हैं और पौधों का विकास रुक जाता है। यह रोग शुष्क और गर्म मिट्टी में तेजी से फैलता है। झाँसी और बांदा जैसे क्षेत्रों में इसकी उपस्थिति गंभीर समस्या बन चुकी है।
- **शीथ ब्लाइट:** धान कटाई के बाद लगाई गई सब्जियों में पाया गया यह रोग तनों पर भूरे धब्बे बनाता है, जो बाद में पूरे पौधे को नष्ट कर सकता है।

क्षेत्रवार रोग प्रकोप का विश्लेषण

- **पश्चिमी उत्तर प्रदेश (जैसे मेरठ, सहारनपुर):** 2022 में मेरठ में झुलसा रोग के कारण 200 हेक्टेयर से अधिक आलू की फसल नष्ट हुई। सहारनपुर में खीरे में चूर्णिल आसिता से 40 प्रतिशत तक की हानि दर्ज की गई।
- **मध्य उत्तर प्रदेश (लखनऊ, कानपुर):** लखनऊ के मलिहाबाद क्षेत्र में 2021 में भिंडी पर पीत शिरा के प्रकोप से किसानों को कीटनाशकों पर 70 प्रतिशत अधिक खर्च करना पड़ा। कानपुर में गंगा किनारे के इलाकों में बैंगन पर बैक्टीरियल विल्ट का कहर देखा गया।
- **पूर्वी उत्तर प्रदेश (वाराणसी, गोरखपुर):** गोभी में काला धब्बा रोग 2020 में गोरखपुर के आठ ब्लॉकों में फैला, जहाँ 1000 हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र प्रभावित हुआ। मिर्च में जड़ ग्रन्थिनेमाटोड की वजह से बांदा में किसानों को 30 से 40प्रतिशत तक उत्पादन हानि हुई।
- **बुंदेलखंड क्षेत्र (झाँसी, हमीरपुर):** लगातार सूखे और मिट्टी में नमी की कमी के कारण झाँसी में 2023 में टमाटर की फसल का 25 प्रतिशत शीथ ब्लाइट से नष्ट हुआ।

रोग प्रबंधन की प्रभावी रणनीतियाँ

जलवायु अनुरूप कृषि तकनीकें

- मौसम के पूर्वानुमान के अनुसार फसलों की बुवाई का समय तय करना, जैसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश में आलू की बुवाई नवंबर के बजाय अक्टूबर के अंत में करना।
- मल्चिंग और ग्रीन शेड नेट का उपयोग मिट्टी का तापमान नियंत्रित रखने और पौधों को गर्मी से बचाने में सहायक है।

सब्जियों में रोग-प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग (उत्तर प्रदेश के सन्दर्भ में)

उत्तर प्रदेश की जलवायु में आए तीव्र परिवर्तन के चलते सब्जियों में रोगों की आवृत्ति और तीव्रता में स्पष्ट वृद्धि देखी गई है। ऐसे में रोगों से सुरक्षित एवं टिकाऊ उत्पादन के लिए ऐसी किस्मों का चयन करना आवश्यक हो गया है, जो विशेष रोगों के प्रति प्रतिरोध क्षमता रखती हों। राज्य के विभिन्न हिस्सों में उगाई जा रही प्रमुख सब्जियों के लिए अनेक किस्में उपलब्ध हैं, जो क्षेत्रीय जलवायु के अनुरूप और विभिन्न रोगों के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करती हैं।

क) आलू

उत्तर प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्रों जैसे मेरठ, अलीगढ़ और बुलंदशहर में पछेती झुलसारोग के चलते भारी नुकसान होता है। इसे ध्यान में रखते हुए, 'कुफरी चिप्सोना-4' जैसी किस्म, जो इस रोग के प्रति सहनशील है, विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध हो रही है। वहीं, 'कुफरी लवकर' किस्म, जो अधिक तापमान में भी उत्पादन बनाए रखती है, प्रयागराज, इटावा और जालौन जैसे इलाकों में लाभकारी मानी जाती है।

ख) टमाटर

लखनऊ, कानपुर और बाराबंकी जैसे जिलों में यलो वेन कर्ल वायरस तथा बैक्टीरियल विल्ट के संक्रमण को नियंत्रित करने के लिए 'पूसा हाइब्रिड-4' किस्म प्रभावी पायी गयी है। इसके अलावा, 'अर्का रक्षक' नामक किस्म में फ्यूजेरियम विल्ट (*फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम*) के प्रति उल्लेखनीय सहनशीलता पाई गई है, जिससे बुंदेलखंड जैसे अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में यह सफलता पूर्वक उगायी जा रही है।

ग) भिंडी

भिंडी की खेती में वाईवीएमवी (यलो वेन मोजेक वायरस) बड़ा संकट बनकर उभरता है। 'परभानी क्रांति' इस रोग के विरुद्ध प्रतिरोधक क्षमता रखती है और लखनऊ, हरदोई तथा सीतापुर जैसे जिलों में इसे अच्छे परिणामों के साथ अपनाया जा रहा है। इसी प्रकार, 'अर्का अनुपमा' किस्म वायरस से प्रभावित क्षेत्रों में विश्वसनीय उत्पादन देती है।

घ) गोभी और फूलगोभी

पूर्वांचल के जिलों जैसे वाराणसी, कुशीनगर और देवरिया में ब्लैक रॉट रोग की समस्या गंभीर है। इससे निपटने के लिए 'पूसा शुभ्रा' किस्म अत्यधिक उपयोगी पाई गई है, जो इस रोग के विरुद्ध सुरक्षा देती है। वहीं, फूलगोभी की 'पूसा हिमज्योति' किस्म शीतकालीन परिस्थितियों में बेहतर प्रदर्शन करती है और ब्लैक रॉट से सुरक्षित रहती है।

ङ) मिर्च

बुंदेलखंड और पूर्वी उत्तर प्रदेश में रूट नॉट नेमाटोड तथा लीफ कर्ल जैसे रोगों से प्रभावित मिर्च की फसलों में 'अर्का लोहित' किस्म की खेती लाभकारी रही है। इसके अतिरिक्त, 'काशी सुरख' किस्म वाराणसी और आसपास के क्षेत्रों में लीफ कर्ल वायरस के विरुद्ध बेहतर प्रतिरोध क्षमता दिखा रही है।

च) लौकी, कद्दू व अन्य कुकुरबिट फसलें

खीरा, करेला, लौकी और तोरई जैसी फसलों में डाउनी मिल्ड्यू और पाउडरी मिल्ड्यू जैसे रोग आम हैं। सहारनपुर, बरेली और बिजनौर जैसे जिलों में 'अर्का बहार' (लौकी) जैसी किस्मों का उपयोग किया जा रहा है, जो इन रोगों से बचाव करती है। तोरई की 'पूसा समृद्धि' किस्म भी कीट और फफूंदजनित रोगों के प्रति सहनशील मानी गई है।

छ) बैंगन

बैक्टीरियल विल्ट से बचाव हेतु 'पूसा श्यामला' किस्म को कानपुर, चित्रकूट और बांदा जैसे क्षेत्रों में अपनाया जा रहा है। इसके अतिरिक्त, 'अर्का नीलकांत' किस्म उच्च तापमान और रोगों के विरुद्ध बेहतर प्रदर्शन करती है।

यह विस्तृत विश्लेषण स्पष्ट करता है कि जलवायु परिवर्तन के कारण सब्जी रोगों की प्रकृति, तीव्रता और वितरण में बदलाव आ रहा है, जिससे राज्य के किसान गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। अतः स्थानीय जलवायु को ध्यान में रखकर क्षेत्रीय रोग प्रबंधन रणनीतियों को लागू करना अत्यंत आवश्यक है।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन के कारण उत्तर प्रदेश की कृषि अब अधिक जोखिम पूर्ण और अस्थिर होती जा रही है। फसल उत्पादन, मिट्टी की गुणवत्ता और रोग-कीट नियंत्रण सभी प्रभावित हैं। इसलिए आवश्यक है कि कृषि क्षेत्रवार जलवायु-उन्मुख कृषि योजनाएँ बनायी जाये। फसल विविधीकरण, सटीक कृषि और प्राकृतिक खेती को प्रोत्साहन मिले। हाँ, यह आवश्यक है कि प्रदेश में स्थापित विभिन्न अनुसंधान केन्द्रों के वैज्ञानिकों और किसानों के बीच समन्वय स्थापित किया जाए, क्योंकि वैज्ञानिक अनुसंधान से प्राप्त नवीन तकनीकों और किसानों के व्यावहारिक अनुभवों के मेल से ही कृषि कार्यों को अधिक उत्पादक, टिकाऊ और लाभकारी बनाया जा सकता है। यही दीर्घकालिक कृषि समाधान का आधार है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

फसलों में समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन

खलील खान*, अजय कुमार सिंह, राजेश राय, अरूण कुमार सिंह, शशीकान्त एवं शुभम यादव

कृषि विज्ञान केन्द्र, दलीपनगर, कानपुर देहात, उत्तर प्रदेश

च.शे.आ. कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: khankhalil64@gmail.com

परिचय

समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन एक ऐसी विधि है। जिसमें कार्बनिक, अकार्बनिक और जैविक स्रोतों के मिश्रित उपयोग द्वारा पौधों को उचित मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध करवाये जाते हैं। इसका मुख्य उद्देश्य उर्वरक उपयोग क्षमता को अधिक करना, मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में सुधार व उर्वरक क्षमता में वृद्धि आदि से सम्बन्धित रहते है। ताकि लम्बे समय तक स्थायी कृषि द्वारा अधिक उत्पादन लिया जा सके। समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन, तकनीकी रूप से परिपूर्ण, आर्थिक रूप से आकर्षक, व्यावहारिक रूप से सम्भव और पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित होना अनिवार्य है।

समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन

क) उचित उर्वरक उपयोगः लम्बे समय तक की जाने वाली स्थायी कृषि में समेकित पोषक तत्व प्रणाली का एक विशेष महत्व है क्योंकि जहाँ बढ़ती हुयी जनसंख्या के लिये पर्याप्त मात्रा में कृषि उत्पाद अनिवार्य है वहीं प्राकृतिक सम्पदा जैसे मृदा एवं जल को संरक्षित करना और उन्हें दूषित होने से बचाना भी आवश्यक है। एक अनुमान के अनुसार 2050 तक भारत वर्ष की जनसंख्या 1.5 अरब हो जायेगी। इस बढ़ती हुयी जनसंख्या की जरूरत पूरी करने के लिये हमें लगभग 350 मिलियन टन अनाज की पैदावार करनी होगी। इस कारण मृदा से अधिक में पोषक तत्व निकल जायेगे। जिन्हें हमें फिर से मिट्टी में वापिस डालना पड़ेगा। ताकि मृदा की उर्वरकता एवं उत्पादन क्षमता बनी रहे। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन अनिवार्य है। पर्वतीय क्षेत्रों में वर्षा जल द्वारा पोषक तत्वों के बहाव व नुकसान को कम करने में एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन विशेष भूमिका निभाता है।

ख) पोषक तत्व की हानि में कमीः साधारणतः मिट्टी की उर्वरता व पैदावार क्षमता बनाये रखने के लिये रासायनिक उर्वरकों का उपयोग किया जाता है। परन्तु रासायनिक पोषक तत्वों का बहुत कम भाग पौधों को उपलब्ध होता है और शेष भाग व्यर्थ चला जाता है। जैसे कि नत्रजन उर्वरक के कुल भाग का 35 से 40 प्रतिशत फास्फोरस उर्वरकों का 15 से 25 प्रतिशत और पोटाश उर्वरकों का 30 से 50 प्रतिशत भाग ही पौधों को उपलब्ध हो पाता है। एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन द्वारा उपयोग क्षमता को बढ़ाया तथा पोषक तत्वों की हानि को कम किया जा सकता है। इसी प्रकार लम्बे समय तक रासायनिक उर्वरकों के अधिक प्रयोग कई तरह के हानिकारक प्रभाव उत्पन्न करता है। जैसे -

- मृदा एवं पौधों में पोषक तत्वों का असंतुलन होना तथा पैदावार कम होना।
- अधिक कीड़े-मकोड़े व बीमारियों का प्रकोप।
- मृदा से जैविक पदार्थों का क्षय होना।
- वातावरण का दूषित होना।
- दूषित खाद्य पदार्थ पैदा होना।

ग) उर्वरक के बढ़ते मूल्यः उर्वरक के बढ़ते मूल्य को देखते हुये फसलों से अधिक पैदावार लेने के लिये यह जरूरी है कि हम रासायनिक उर्वरकों का संतुलित और सही मात्रा में प्रयोग करें एवं अन्य स्रोतों द्वारा पोषक तत्वों को उपलब्ध कराना चाहिये। वास्तव में यही एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन है।

घ) पोषक तत्वों का असंतुलनः रासायनिक उर्वरकों के लगातार प्रयोग से कुछ सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होने लगती है। भूमि में उचित व संतुलित पोषक तत्वों की मात्रा बनाये रखने में एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन विशेष भूमिका निभाता है।

ङ) मृदा का स्वस्थ पर्यावरणः एकीकृत तत्वों से मृदा में स्वस्थ वातावरण बना रहता है जो कि सूक्ष्म जीवों की वृद्धि के लिये अत्यन्त लाभदायक है। ये जीव मृदा में कई तरह की रासायनिक प्रक्रियाओं में अपना योगदान देते है। जिससे स्वस्थ वातावरण के साथ-साथ मृदा में पोषक तत्वों का सही संतुलन

भी बना रहता है। ये सूक्ष्म जीव जैविक पदार्थों के गलने सड़ने में भी सहायक होते है। जिससे कई पोषक तत्व मुख्यतः नत्रजन, फास्फोरस सल्फर, जस्ता, लोहा, तांबा इत्यादि पौधों को उपलब्ध होते है। जो कि मृदा की उर्वरता को बढ़ाते हैं।

च) अकेले कार्बनिक और जैविक पोषक तत्वः फसल की उत्पादकता को नहीं बनाये रख सकते है। अकेले जैविक पदार्थों का उपयोग भी अधिक लाभदायक नहीं रहता। जैविक खादों का प्रयोग पर्यावरण व मानवता की दृष्टि से भले ही महत्वपूर्ण है। लेकिन बढ़ती हुयी जनसंख्या के लिये खाद्य पदार्थों की आपूर्ति करने के लिये ये अकेले ही उपयुक्त नहीं माने गये है। क्योंकि जैविक खादों में पोषक तत्व बहुत कम मात्रा में मौजूद होते है। जो पोषक तत्व मौजूद होते है वह भी कुछ रासायनिक प्रक्रियाओं के बाद ही पौधों को उपलब्ध हो पाते है। इसलिये व्यावहारिक रूप से कार्बनिक स्त्रोतों के उपयोग से पोषक तत्वों को पूरा करना, साथ ही उच्च फसल की पैदावार का लक्ष्य पूर्ण करना बहुत ही मुश्किल है।

छ) अन्य लाभः इसके अलावा एकीकृत पोषक तत्व प्रणाली के और भी लाभ है। इसे पैदावार बढ़ती है तथा मृदा की पैदावार क्षमता लम्बे समय तक कायम रहती है। पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है। जिससे उर्वरकों के कम उपयोग से अधिक पैदावार होती है। मृदा की संरचना बनी रहती है। मृदा पदार्थ मौजूद होने के कारण उसकी जल सोखने की क्षमता बढ़ जाती है। मृदा में उपस्थित कई तरह के एंजाइम सक्रिय हो जाते है। जिससे फसलों की पैदावार व गुणवत्ता में बृद्धि होती है।

पोषक तत्वों के मुख्य स्त्रोत

अकार्बनिक या रासायनिक उर्वरक इन खादों में एक या एक से अधिक पोषक तत्व होते है जो कि पौधों को तुरन्त उपलब्ध हो जाते है। अलग-अलग फसलों के लिये सही अनुपात में रासायनिक खादों का प्रयोग बहुत अनिवार्य है।

नवजन उर्वरक	फास्फोरस उर्वरक	पोटाश उर्वरक
यूरिया नवजन (46%) कैन नवजन (25%)	सिंगल सुपर फास्फेट (16%) राक फास्फेट (25%)	क्यूरेट ऑफ पोटाश (60%)

जैविक खादः जैविक पदार्थों में गली सड़ी पत्तियाँ, टहनियाँ, फल, फूल तथा जानवरों के मल मूत्र इत्यादि सम्मिलित होते है। सभी प्रकार के जैविक व्यर्थ जैसे फसलों के अवशेष, खरपतवार इत्यादि भी जैविक पदार्थों के प्रकार है। इन पदार्थों को खेतों में डालने से पहले अच्छी तरह से गलाया व सड़ाया जाता है। जिसे कम्पोस्टिंग कहते है।

समृद्ध खाद बनाने की विधि

1. कृषक भाई सर्वप्रथम 3x1x1 मीटर की न्यूनतम आयतन का गड्ढा खोदे। गड्ढे का आकार उपलब्ध भूमि के अनुसार बदला भी जा सकता है।
2. उपलब्ध जैविक अवशेषों जैसे खरपतवार, घास फूस, वृक्षों के पत्ते तथा फसलों आदि को महीन काट लें।
3. यूरिया रांक फास्फेट ताजा गाय का गोबर सिंचाई पानी, मिट्टी आदि तैयार रखें। ये मात्रा उपरोक्त आयात के गड्ढे के लिये पर्याप्त है।
4. लगभग 10 किलो गोबर को 10-15 लीटर पानी में घोल बनाये और पहली परत के रूप में डाल दें।
5. गड्ढे में कटे कार्बनिक अवशेष तथा 200 ग्राम यूरिया + 400 ग्राम रॉक फास्फेट +10 किलो ताजा गोबर +10-15 लीटर पानी का घोल बना के 4.5 इंच की परत बना दें।
6. इस प्रकार गड्ढे में गोबर व जीवांश क्रमशः डाले।
7. जब गड्ढा भर जाये तो इसे ऊपर से घास फूस से ढक दें।
8. इसे एक महीने के लिये छोड़ दें।
9. इसे खोले और अच्छी तरह मिलायें तथा 50-60 लीटर पानी डाले और 15-20 दिन इसी रूप में रखे। जिसके उपरान्त, समृद्ध खाद तैयार हो जायेगी।

एक अच्छी जैविक खाद वही होती है जो गहरी भूरे रंग के साथ-साथ भुरभुरी प्रकृति की हो तथा गंधहीन हो।

क) हरित खादः हरित खाद के लिये कुछ खास फसलों को उगाया जाता है जिन्हें परिपक्व होने से पहले ही काट दिया जाता है तथा मृदा में मिलाया जाता है। एक दो महीने में सड़ कर जैविक खाद बना देती है। इन फसलों में मुख्यतः वह फसले आती है जो वातावरण से नत्रजन जैसे महत्वपूर्ण तत्व को वायुमण्डल से लेकर अपनी जड़ों में स्थिर कर उस खेत में उगायी जाने वाली अगली फसल को उपलब्ध करवाती है। इसके अतिरिक्त हरी खादे भूमि में कार्बनिक पदार्थ की बढ़ोत्तरी कर भूमि संरचना में महत्वपूर्ण सुधार लाती है। उदाहरणतः घास, ढैंचा, ग्वार, सनई खाद के लिये उपयुक्त है।

ख) सान्ध्र जैविक पदार्थः जैविक पदार्थों को कुछ विशेष प्रक्रियाओं से गुजारने पर सान्ध्र जैविक पदार्थ बनते है। जिन्हें

जैविक खादों के रूप में उपयोग किया जाता है। इनमें पोषक तत्वों की मात्रा साधारण जैविक पदार्थों से अधिक होती है। इस श्रेणी में मुख्यतः सूखी मछली का चूरा, हड्डियों का चूर्ण, चोकर व खली शामिल है।

ग) गोबर खादः अच्छी गली सड़ी गोबर की खाद की गुणवत्ता भी अच्छी होती है और उसमें पोषक तत्वों की उपलब्धता भी अधिक होती है। यह पशुओं के मलमूत्र तथा उनके विघटन से तैयार की जाती है। नत्रजन 0.5-15 प्रतिशत फास्फोरस 04-0.8 प्रतिशत पोटाश 0.5-19 प्रतिशत मात्रा में उपलब्ध है।

1. **फलीदार पौधे लगानाः** खेतों में आस-पास फलीदार पौधे लगाना भी एकीकृत पोषक तत्व प्रणाली का एक अभिन्न अंग है। इन पौधों की जड़ों में गाठे होती है। जिनमें राईजोबियम बैक्टीरिया होते है। इस बैक्टीरिया में वातावरण से नत्रजन की स्थिर करने की क्षमता होती है। जिसे पौधे उपयोग करते है तथा अपनी नत्रजन की जरूरत को पूरा करते है। ढैंचा इस प्रकार की एक महत्वपूर्ण फसल है।
2. **जीवांश खादेंः** इस श्रेणी में मुख्यतः नत्रजन स्थिरीकरण, फास्फोरस परिवर्तनशील सूक्ष्म जीव आते है। इन खादों में सूक्ष्म जीवों के सक्रिय कोशिकायें होती है। बाजार में कई तरह की जीवांश खादे मौजूद है।

(अ) राईजोबियम बैक्टीरियाः यह एक सहजीवी नत्रजन स्थिरीकरण सूक्ष्म जीव है जो पौधों की जड़ों में बनी विशेष गांठों में मौजूद होता है। यह बैक्टीरिया मृदा में 25-30 किलोग्राम/ हैक्टेयर की दर से नत्रजन मिलाता है।

(ब) ब्लू ग्रीन एल्गी (बी0जी0ए0)ः जैसे ऐनाबीनाये जीव प्रतिवर्ष 20-30 किलोग्राम/ हेक्टेयर की दर से नवजन स्थिर करते है।

(स) ऐजोटोबैक्टः यह बैक्टीरिया मृदा में मौजूद होता है जो 24-27 किलोग्राम/ हैक्टेयर की दर से हर साल नत्रजन स्थिर करता है। इसके अलावा यह सूक्ष्म जीव कई तरह के पादप वृद्धि हारमोन, विटामिन या कवकरोधी पदार्थ भी सावित करता है।

(द) ऐजोस्पाईरिलमः यह हर साल मृदा में 15-20 किलोग्राम/ हैक्टेयर की दर से नत्रजन मिलाता है।

(ड़) माइकोराईजाः माइकोराईजा के प्रयोग से पौधों को पोषक तत्वों की होने वाली उपलब्धता बढ़ जाती है। इन पोषक तत्वों में मुख्यतः फास्फोरस पोटाश तथा सूक्ष्म पोषक तत्व आते है। इसके साथ-साथ जड़ क्षेत्र के आस-पास नवजन स्थिरीकरण वैक्टीरिया की संख्या भी बढ़ जाती है।

(च) फास्फेट घुलनशील जीवः वे सूक्ष्म जीव मृदा में उपस्थित, अघुलनशील फास्फेट को घुलनशील अवस्था में परिवर्तित करता है। जिससे पौधों के लिये इसकी उपलब्धता बढ़ जाती है। उदाहरणतः स्युडोमोनास, बैसीलस, एसपरजिलस जैसे सूक्ष्म जीव।

निष्कर्ष

पौधों को संतुलित आहार प्रदान करने हेतु व भूमि की भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणवत्ता के लिये एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन करना आवश्यक है। अतः कार्बनिक और अकार्बनिक पोषक स्रोतों पर अत्यधिक निर्भरता फसल उत्पादकता और मिट्टी पर्यावरण स्वास्थ्य बनाये रखने में सफल नहीं हो सकती है। एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन, तकनीकी रूप से परिपूर्ण, आर्थिक रूप से व्यावहारिक सम्भव और पर्यावण की दृष्टि से सुरक्षित होना अनिवार्य है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

भारतीय कृषि में ए.आई. का भविष्य और महत्व

शरद बिसेन* एवं धारणा बिसेन

कृषि महाविद्यालय, बालाघाट, जेएनकेवीवी, जबलपुर, मध्य प्रदेश

पत्राचारकर्ता: bisensharad@gmail.com

परिचय

भारत की कृषि व्यवस्था आज जलवायु परिवर्तन की गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है। अनियमित वर्षा, चक्रवात, तापमान वृद्धि और सूखा जैसी परिस्थितियों किसानों की आजीविका को अस्थिर बना रही हैं। ऐसे समय में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) का समुचित और समन्वित उपयोग भारतीय कृषि को अधिक सतत, उत्पादक और अनुकूल बनाने के लिए अत्यंत आवश्यक हो गया है। एआई तकनीके खेती को न केवल आधुनिक बना रही है बल्कि किसानों को जलवायु अस्थिरताओं से प्रभावी ढंग से निपटने में सक्षम भी कर रही है।

एआई आधारित मौसम पूर्वानुमान प्रणाली किसानों के लिए अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो रही है। ये सिस्टम ऐतिहासिक मौसम डेटा का विशाल विश्लेषण करके भविष्य के मौसम की सटीक भविष्यवाणी करते हैं। इससे किसान बीज बोने, सिंचाई और खाद-पानी जैसी गतिविधियों का सही समय चुन पाते हैं। परिणामस्वरूप फसल विफलता का जोखिम कम होता है और उत्पादन स्थिर रहता है। इसी तरह फसल रोग और कीट नियंत्रण के लिए एआई आधारित कंप्यूटर विजन तकनीक और संसर वास्तविक समय में फसल की स्थिति की निगरानी करते हैं। रोग या कीट की पहचान होते ही एआई सिस्टम स्वचालित रूप से सटीक दवाओं का छिड़काव कर देते हैं, जिससे उत्पादन में वृद्धि और नुकसान में कमी आती है।

सिंचाई के क्षेत्र में भी एआई ने क्रांतिकारी बदलाव किए है। स्मार्ट इरिगेशन सिस्टम में लगे एआई संसर मृदा की नमी और पन्सल की आवश्यक्ता के आधार पर सिंचाई करते हैं। इससे जल कर 30% तक संरक्षण संभव हुआ है, जो जल संक्ट वाले क्षेत्रों में विशेष रूप से उपयोगी है। इसके अलावा एआई आधारित रिसोर्स ऑप्टिमाइजेशन तकनीके उर्वरक, पानी और ऊर्जा का उपयोग केवल आवश्यक्ता अनुसार करती हैं। इससे पर्यावरणीय असर न्यूनतम रहता है और लागत घटती है।

सरकार और निजी क्षेत्र भी एआई करे कृषि में अपनाने के लिए सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। भारत सरकार ने राष्ट्रीय कीट निगरानी प्रणाली और Kisan e-Mitra जैसे एआई समर्थित टूल्स नॉन्च किए हैं, जो किसानों को मौसम और फसल संबंधी जानकारी तुरंत उपलब्ध कराते हैं। वही निजी कंपनियों जैसे Farmonaut और Farm Vibes. AI कृत्रिम बुद्घिमता द्वारा संसाधनों के कुशल प्रबंधन, ट्रेसिबिलिटी और निगरानी के नए समाधान प्रस्तुत कर रही है।

एआई के समन्वित उपयोग से किसानों को अनेक लाभ मिल रहे है। फसल उत्पादकता में महत्वपूर्ण वृद्घि हो रही है, उत्पादन के खर्च और नुकसान में 30% तक कमी आ रही है। सतत कृषि के लिए बेहतर जल, मृदा और ऊर्जा प्रबंधन संभव हो रहा है। किसान जोखिमों के प्रति अधिक जागरूक हो रहे है और स्मार्ट निर्णय लेने में सक्षम बन रहे हैं। मौसम परिवर्तन के प्रति उनकी अनुकूलन क्षमता भी बढ़ रही है। दीर्घकालीन दृष्टि से एआई खेती में रोजगार, शुद्घ आय और खाद्य सुरक्षा में सुधार का मार्ग प्रशस्त कर रहा है।

निष्कर्षतः परिवर्तनशील मौसम में कृषि क्षेत्र की चुनौतियों से निपटने के लिए एआई का समय, समन्वित और सतत उपयोग अपरिहार्य हो गया है। सही डेटा, संसाधन और नीति समर्थन के साथ एआई तकनीके भारतीय कृषि को भविष्य के लिए तैयार कर रही है। आने वाले समय में किसान जलवायु परिवर्तन के बावजूद अपनी उपज, आमदनी और पर्यावरण संतुलन बनाए रख सकेंगे।

भविष्य की संभावनाएँ

आने वाले वर्षों में एआई भारतीय कृषि को और भी गहराई से प्रभावित करेगा।

- **प्रिसिजन फार्मिंग:** खेत के हर हिस्से की अलग-अलग ज़रूरतों को पहचानकर उसी अनुसार बीज, पानी और खाद का

उपयोग।

- **ड्रोन और रोबोटिक्सः** एआई संचालित ड्रोन फसल की निगरानी, छिड़काव और डेटा संग्रह में अहम भूमिका निभाएँगे।
- **ब्लॉकचेन और एआई का संयोजनः** फसल की ट्रेसिबिलिटी और सप्लाई चेन पारदर्शिता सुनिश्चित होगी।
- **कस्टमाइज्ड सलाहः** किसानों को उनकी भूमि, मौसम और फसल के अनुसार व्यक्तिगत सुझाव मिलेंगे।
- **सतत कृषिः** एआई पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखते हुए उत्पादन बढ़ाने में मदद करेगा।

नीतिगत सुझाव

भारतीय कृषि में एआई को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए कुछ ठोस नीतिगत कदम आवश्यक हैः

1. **डेटा अवसंरचना का विकास** किसानों के लिए सटीक और स्थानीय स्तर पर उपलब्ध डेटा सुनिश्चित करना।
2. **किसानों का प्रशिक्षण** एआई टूल्स के उपयोग हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षण और जागरुकता कार्यक्रम चलाना।
3. **सस्ती तकनीक उपलब्ध कराना** छोटे और सीमांत किसानों के लिए एआई आधारित उपकरणों को सुलभ और किफायती बनाना।
4. **सार्वजनिक-निजी भागीदारी** सरकार और निजी कंपनियों के बीच सहयोग से नवाचार को बढ़ावा देना।
5. **नीति समर्थन** एआई आधारित कृषि तकनीकों को अपनाने के लिए सब्सिडी, प्रोत्साहन और वित्तीय सहायता प्रदान करना।
6. **स्थानीय भाषाओं में समाधान** एआई प्लेटफॉर्म को किसानों की मातृभाषा में उपलब्ध कराना ताकि उपयोग आसान हो।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

लहसुन की उन्नत खेती एवं प्रबंधन

एस. एल. वास्केल* , ए. के. त्रिपाठी एवं रिंकू चौहान

कार्यक्रम सहायक, वैज्ञानिक एवं स्कॉलर

कृषि विज्ञान केंद्र सागर - II, बिजोरा

पत्राचारकर्ता: sukhlalwaskel98@gmail.com

परिचय

लहसुन की खेती पूरे भारत वर्ष में की जाती है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से मसाले के रूप में किया जाता है। अयुर्वेदिक दवाओ में भी इसका प्रयोग किया जाता है। 1 प्रतिशत लहसुन का अर्क मच्छरो से 8 घंटे तक सुरक्षा करता है। इसकी खेती तमिलनाडु,आंध्रा प्रदेश, उत्तर प्रदेश के मैनपुरी एवं इटावा, गुजरात के जामनगर एवं मध्य प्रदेश के इंदौर, मंदसौर एवं सागर जिले के देवरी ब्लॉक में बड़े पैमाने में की जाती है। इसमे तत्व के रूप में विटामिन सी एवं प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पाई जाती है। इससे एक प्रकार का तेल निकलता है जिसे डाई एलाईल डाई सल्फाइड कहते है लहसुन में जो विशिष्ट गंध होती है वह इसी के कारण पाई जाती है। इसमे कीटनाशक गुण भी पाये जाते है।

बुवाई के लिए खेत की तैयारी

खेत की तैयारी के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके दो-तीन जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करने के बाद खेत को भुरभुरा समतल बना लेना चाहिए तथा 400-500 क्विंटल सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद जुताई करते समय प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। अंत में रोटावेटर चलाकर मिट्टी को अच्छी तरह से बारीक करना चाहिए।

किस्मे

Yamuna Safed 5: अवधि 150 से 160 दिन यह फसल पककर कटाई के लिए 150-160 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी औसतन पैदावार 40-45 क्विंटल प्रति एकड़ है।

G.H.C – 1: अवधि 150 से 160 दिन यह अन्य किस्मों से अधिक उपज वाली और सुगंधित किस्म है। इसकी कलियां बड़े आकार की होती हैं जिनका छिल्का आसानी से उतारा जा सकता है। इसकी औसतन पैदावार 42-45 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

Yamuna Safed (G – 1): अवधि 150 से 160 दिन इसकी गांठे सख्त और सफेद होती हैं और कलियां प्राती के आकार की होती हैं और प्रत्येक गांठ में 15-20 कलियां होती हैं।

एग्रीफाउण्ड पार्वती (जी -313): अवधि इस किस्म की खेती पहाड़ी क्षेत्र में अधिक होती है। इसके शल्क कंद 5 से 7 सेमी व्यास में हल्के सफेद और बैंगनी मिश्रित रंग के होते है। इसके शल्ककंद में 10 से 15 कलियां जिनका वजन 4 से 4.5 ग्राम तक होता है। ये 250 से 270 दिनों में तैयार हो जाती है प्रति हेक्टयर 175 से 225 क्विंटल पैदावार मिल जाती है।

टी – 56-4: अवधि लहसुन की इस किस्म को काफी उपयुक्त माना जाता है। इसके शल्क कंद छोटे आकार के होते हैं और इसका रंग सफेद होता है। इसके हर शल्क कंद में 25 से 35 कलियां होती हैं। इससे प्रति हेक्टेयर 80 से 100 क्विंटल की पैदावार प्राप्त होती है।

गोदावरी अवधिः गुण इस किस्म के शल्क कंद मध्यम आकार के होते हैं। यह हल्की गुलाबी और सफेद रंग की होती है। हर शल्क कंद में 20 से 25 कलियां होती हैं। इससे प्रति हेक्टेयर 100 से 105 क्विंटल पैदावार प्राप्त होती है।

भीमा पर्पलः अवधि गुण इसके नंद बैंगनी रंग के दिखाई देते हैं। इससे प्रति हेबटेयर 60 से 70 विटल तक पेदनार मिल सकती है। इस किस को दिल्ली, यूपी पंजाब, बिहार, हरियाणा, कर्नाटक और आंध प्रदेश ने लिए उपयुक्त माना जाता है।

यमुना सफेद -3 (G – 282): अवधि 140-150 दिन इस किस्म के कद सफेद और साइज़ 4.76 (व्यास) तक होता है। यह 140 से 150 दिनों में पककर तैयार हो जाती

हैं। इससे प्रति हेक्टेयर 125 से 130 विंटल उपज मिल जाती हैं।

यमुना सफेद-4 (उ-323): लहसुन की एक उन्नत किस्म है, जो चांदी जैसे सफेद रंग के बड़े कंदों (3.5-4.0 सेमी व्यास) और क्रीम रंग की कलियों के लिए जानी जाती है, जिसमें 20-25 कलियाँ होती हैं; यह 140-150 दिनों में पककर तैयार हो जाती है और इसकी औसत उप।

बीज और बीज उपचार

बीज की मात्रा क्लोव (बीज सामग्री) के आकार के अनुसार कम तथा ज्यादा पड़ती है फिर भी रोपण की दूरी 15 सेंटीमीटर लाइन से लाइन और 10 सेंटीमीटर पौधे से पौधे तथा लहसुन की आकार 8 से 10 मिलीमीटर ब्यास वाले क्लोव की मात्रा लगभग 5 क्विंटल प्रति हेक्टेयर लगती हैघ लहसुन की बुवाई से पहले बीज को 10 ग्राम ट्राईकोडर्मा से प्रति किलोग्राम बीज की दर, या रासायनिक दवाओं के रूप में कार्बेंडाजिम एवं मैंकोजेब 3 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से से बीज उपचारित कर लेना चाहिए।

बुवाई का सर्वोत्तम समय

लहसुन के लिए 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक बुवाई का सर्वोत्तम समय होता है। बुवाई में लाइन से लाइन की दूरी 15 सेंटीमीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 8-10 सेंटीमीटर रखनी चाहिए।

पौधरोपण

अच्छे कंद की फसल पैदा करने के लिए अधिक ब्यास वाले आकार के क्लोव (बीज सामग्री) का बुवाई में प्रयोग करना चाहिए तथा बुवाई लाइनो में करनी चाहिएघ लाइन से लाइन की दूरी 15 सेंटीमीटर एवं पौधे से पौधे की दूरी 10 सेंटीमीटर रखनी चाहिए। क्यारियों की चौड़ाई ऐसी रखनी चाहिए कि मेड़ों पर बैठकर निराई गुड़ाई कर सके जिससे कि पैरो से फसल में नुकसान न हो सके।

पोषण प्रबंधन

उर्वरको का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए फिर भी सामान्य दशा में 500 क्विंटल सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद साथ ही 100 किलोग्राम नाइट्रोजन, 60 किलोग्राम फास्फोरस तथा 50 किलोग्राम पोटाश तत्व के रूप में प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिएघ नाइट्रोजन की आधी मात्रा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के दो दिन पहले बेसल डोज के रूप में तथा शेष मात्रा बुवाई के 30 दिन बाद टापड्रेसिंग के रूप में देनी चाहिए।

सामान्यतः 20% बोरॉन का 200-250 ग्राम प्रति एकड़ स्प्रे किया जाता है, खासकर जब कंद बनने शुरू हों (लगभग 45-90 दिन की फसल में), इसे ड्रिप या सिंचाई के साथ भी 200-500 ग्राम प्रति एकड़ दिया जा सकता है, ताकि कंद फटने, चमक और गुणवत्ता में सुधार हो सके।

सिंचाई प्रबंधन

पहली सिंचाई 15 से 20 दिन बुवाई के बाद करनी चाहिए। वनस्पति वृद्धि के समय 7 से 8 दिन के अंतराल पर तथा जाड़ो के मौसम में 10 से 15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। गाँठे बनाते समय आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए तथा फसल परिपक्वता पर पहुचे तो सिंचाई बंद कर देनी चाहिए।

फसल में खरपतवार नियंत्रण

लहसुन की अच्छी उपज एवं गुणवत्तायुक्त कंद प्राप्त करने के लिए समय से तथा आवश्यकतानुसार निराई गुड़ाई करते रहना चाहिए। जिससे खेत साफ़ रहे और खरपतवार न उग सके। पहली निराई गुड़ाई बुवाई के 30 दिन बाद दूसरी 60 दिन बाद करनी चाहिए। खरपतवार नियंत्रण हेतु रसायन का भी प्रयोग कर सकते है जैसे पेण्डामेथालीन एवं आक्सीडेजान बुवाई के एक दिन बाद अंकुरण से पहले क्रमशः 3.5 लीटर प्रति हेक्टेयर तथा 0.25 किलोग्राम सक्रीय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से 700 से 800 लीटर पानी में घोलकर खेत में स्प्रे करना चाहिए।

प्रमुख कीट और नियंत्रण

थ्रिप्सः पत्तियों का रस चूसकर नुकसान पहुँचाते हैं, जिससे पत्तियाँ सूखने लगती हैं।

नियंत्रणः फिप्रोनिल 5% SC (1.5 मिली/लीटर पानी में) या प्रोफेनोफोस/मैलाथियान का छिड़काव करें, जब प्रति पौधा 20-30 थ्रिप्स दिखें।

सफेद लटः जड़ों को खाकर पौधे को नुकसान पहुँचाती है।

नियंत्रणः खेत में कच्ची गोबर की खाद न डालें. क्लोरोपायरीफॉस 20% EC (500 मिली/एकड़) या कार्बोफ्यूरान 3% CG (13 किग्रा/एकड़) का प्रयोग करें।

प्रमुख रोग और नियंत्रण

सफेद सड़न (White Rot): मिट्टी जनित फंगस से होता है, जिससे बल्ब सड़ जाते हैं।

नियंत्रणः खेत की स्वच्छता, फसल चक्र और रोपण से

पहले मिट्टी का उपचार करें। प्रमाणित बीज उपयोग करें।

बैंगनी धब्बा (Purple Blotch): पत्तियों पर सफेद और बैंगनी धब्बे बनते हैं।

नियंत्रणः मेंकोजेब 64% + मेटालेक्सिल 4% (400 ग्राम/200 लीटर पानी में) का छिड़काव करें।

झुलसा रोग (Blight): पत्तियों पर नारंगी धब्बे बनते हैं.

नियंत्रणः मेंकोजेब 75% WP (500 ग्राम/200 लीटर पानी में) का छिड़काव 10-15 दिन के अंतराल पर करें।

सामान्य निवारक उपाय

1. प्रमाणित और रोग-मुक्त बीज का प्रयोग करें।
2. खेत में फसल अवशेष न छोड़ें और सफाई रखें।
3. फसल चक्र अपनाएं और सरसों जैसी कवर क्रॉप लगाएं।
4. कच्ची गोबर की खाद के बजाय सड़ी हुई खाद का प्रयोग करें।

कटाई और पैदावार

जब लहसुन की पत्तियां पीली पड़कर सूखने लगे नेक फाल स्टेज इसे कहते है तो फसल परिपक्व समझना चाहिए। इसके बाद सिंचाई बंद कर देना चाहिए इसके 15 से 20 दिन बाद, जब खेत सुखकर कडा हो जाये तो बाद में खुदाई करनी चाहिए। अच्छी तरह सुखाये एवं पकाये गए लहसुन के कन्द साधारण हवादार कमरो में रखे जा सकते है। बीज वाले लहसुन के कन्दो को पत्तियो सहित बिना काटे हवादार कमरो में लटकाकर भंडारित किया जा सकता है।

उपज

लहसुन के कन्दो की उपज प्रजाति एवं क्षेत्र के अनुसार 100 से 120 कुंतल प्रति हेक्टेयर होती है। एग्रीफाउंड प्रजाति पर्वतीय क्षेत्रों में उगाई जाती है। यह सबसे ज्यादा 145 से 175 कुंतल प्रति हेक्टेयर उपज देती है।

निष्कर्ष

लहसुन की खेती किसानों के लिए एक अत्यधिक लाभदायक और नगदी फसल है, क्योंकि इसकी बाजार में साल भर मांग रहती है और यह कम समय (4-6 महीने) में अच्छी आय देती है, खासकर सही जलवायु (12-25°C) और उचित प्रबंधन (उन्नत किस्में, खाद-उर्वरक, सिंचाई) के साथ। यह फसल न केवल पाक-कला में, बल्कि औषधीय गुणों (पाचन, कोलेस्ट्रॉल कम करना) के कारण भी महत्वपूर्ण है, जिससे यह किसानों की आय का एक मज़बूत स्रोत बनती है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देती है, जैसे मध्य प्रदेश के मंदसौर जिले में।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

भारतीय बीज विधेयक 2025 की मुख्य विशेषताएं

अनुभव ठाकुर* , कमरुल निस्सा, रोहित वर्मा एवं नरेंद्र कुमार भरत

बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, डॉ. यशवंत सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन, हिमाचल प्रदेश

पत्राचारकर्ता: anubhavthakur97@gmail.com

परिचय

भारत के कृषि विनियमन में कई दशकों बाद सबसे बड़े सुधारों में से एक प्रारूप बीज बिल 2025 है, जिसका उद्देश्य बीज उद्योग को इस प्रकार परिवर्तित करना है कि यह किसानों के कृषि अधिकारो की सुरक्षा करे, पारदर्शिता बढ़ाए और जिम्मेदार नवाचार को बढ़ावा दे। भारत लगभग 60 वर्षों से बीज अधिनियम 1966 पर निर्भर है। एक ऐसा कानून जो उस समय बनाया गया था जब वैज्ञानिक पादप प्रजनन प्रारम्भिक अवस्था में था, बीज उद्योग छोटा था और विदेशी बीजों का आवागमन सीमित था। लेकिन आज भारत दुनिया के सबसे बड़े और विविधतापूर्ण बीज बाजारों में से एक है, जहाँ निजी कंपनियाँ, कृषि शैक्षणिक संस्थान, आयातक, निर्यातक, नर्सरियाँ, ऑनलाइन प्लेटफॉर्म और करोड़ों किसान एक जटिल आपूर्ति श्रृंखला में जुड़े हुए हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में बीज बिल 2025, बीज उत्पादन, पंजीकरण, परीक्षण, प्रमाणन, बिक्री, आयात और निगरानी की संपूर्ण प्रणाली को आधुनिक बनाना चाहता है। इसका मूल उद्देश्य स्पष्ट है - हर भारतीय किसान को ऐसा बीज उपलब्ध हो जो आनुवंशिक रूप से शुद्ध हो, स्वस्थ, ट्रेस करने योग्य हो और पैदावार के दावे के अनुरूप परिणाम दे।

बीज विधेयक के प्रमुख संरचनात्मक तत्व

बीज किस्मों का पंजीकरण इस विधेयक का आधारभूत घटक है। भारत में किसानों द्वारा उपयोग की जाने वाली कोई भी बीज किस्म तब तक बाजार में नहीं बेची जा सकेगी, जब तक कि उसका औपचारिक रूप से पंजीकरण न हो, सिवाय किसान प्रजातियों या केवल निर्यात के लिए निर्मित बीजों के। किसी भी किस्म के पंजीकरण के लिए, कंपनी, सरकारी संस्था या प्रजनक को बहु-स्थलीय परीक्षणों के वैज्ञानिक प्रमाण प्रस्तुत करने होंगे, जो किस्म के प्रदर्शन, स्थिरता, उपयोगिता और मानव, पशु एवं पर्यावरण सुरक्षा को सिद्ध करते हों। यह पंजीकरण प्रक्रिया प्रतीकात्मक नहीं है। ये परीक्षण भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद संस्थानों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों और अन्य मान्यता प्राप्त संस्थानों में करवाए जाएंगे। इसका उद्देश्य किसानों को अप्रमानित उपज दावों से बचाना है। वर्तमान में उत्पादन में चल रही लेकिन अधिसूचित न की गई किस्मों को अधिकतम तीन वर्ष तक के लिए अस्थायी पंजीकरण दिया जाएगा, जबकि बीज अधिनियम 1966 अधिनियम के अंतर्गत पहले से अधिसूचित किस्मों को स्वतः पंजीकृत माना जाएगा, जिससे आपूर्ति की निरंतरता बनी रहे।

बीज पहचान और गुणवत्ता के लिए ट्रेसबिलिटी प्रणाली

बीज गुणवत्ता नियंत्रण और ट्रेसबिलिटी इस विधेयक के अन्य प्रमुख स्तंभ हैं। अब भारत में बेचे जाने वाले हर बीज पैकेट पर अंकुरण, आनुवंशिक शुद्धता, भौतिक शुद्धता, बीज स्वास्थ्य और विशेषता अभिव्यक्ति के न्यूनतम मानकों का पालन अनिवार्य होगा। ये मानक भारत के भारतीय न्यूनतम बीज प्रमाणन मानक के अनुरूप केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचित किए जाएंगे। हर पैकेट पर स्पष्ट लेबल और एक क्यूआर कोड अनिवार्य होगा, जिसे केंद्रीयकृत बीज ट्रेसबिलिटी पोर्टल द्वारा उत्पन्न किया जाएगा। इससे किसान बीज की उत्पत्ति, परीक्षण परिणाम, किस्म विवरण, प्रमाणन जानकारी और पैदावार प्रदर्शन दावों की पुष्टि कर सकेंगे। इसका उद्देश्य मिलावट, गलत लेबलिंग, एक्सपायरी बैचों को पुनः पैक करने और नकली बीजों की समस्या को समाप्त करना है।

विधेयक यह भी मान्यता देता है कि बीज गुणवत्ता केवल प्रजनक या कंपनी पर निर्भर नहीं, बल्कि पूरी आपूर्ति श्रृंखला पर निर्भर होती है। इसलिए उत्पादकों, प्रसंस्करण, विक्रेताओं, वितरकों और नर्सरियों के पंजीकरण को अनिवार्य बनाया गया है। उत्पादकों एवं प्रसंस्करण को आवश्यक अवसंरचना, उपकरण और प्रशिक्षित कार्मिक दिखाने होंगे; विक्रेताओं/

वितरकों को स्टॉक, बिक्री और एक्सपायरी तिथि का पूरा रिकॉर्ड रखना होगा; नर्सरियों को मातृ पौधों की निगरानी, कीट-रोग मुक्त पौध सामग्री उत्पादन और उचित दस्तावेजीकरण सुनिश्चित करना होगा। व्यवसायों को सुविधा देने के लिए एक केंद्रीय मान्यता प्रणाली भी स्थापित की गई है, जिससे बहुराष्ट्रीय कंपनियों को एकल मान्यता मिल सके और राज्य-स्तरीय प्रक्रियाओं में देरी से बचा जा सके।

बीज गुणवत्ता आश्वासन के लिए नियामक ढाँचाः विधि, परीक्षण और प्रमाणन

एक मजबूत बीज प्रणाली के लिए सशक्त संस्थागत नियंत्रण आवश्यक है। इसी उद्देश्य से यह विधेयक केंद्रीय बीज समिति की स्थापना का प्रावधान करता है। यह बहु-सदस्यीय समिति वरिष्ठ सरकारी अधिकारियों, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद वैज्ञानिकों, जैव विविधता विशेषज्ञों, बीज निगमों के प्रतिनिधियों और किसान/बीज उद्योग प्रतिनिधियों से मिलकर बनेगी। यह समिति राष्ट्रीय बीज नीति को दिशा देगी, किस्म पंजीकरण का पर्यवेक्षण करेगी, मानक तय करेगी, संस्थाओं का मान्यता-प्रदान करेगी, आयात-निर्यात पर सलाह देगी और अपीलों का निपटारा करेगी। राज्य बीज समितियाँ इसी प्रकार राज्य-स्तर पर निगरानी करेंगी, उत्पादक-विक्रेता-नर्सरी सूची अद्यतन रखेंगी, स्टॉक और कीमतों की निगरानी करेंगी तथा राष्ट्रीय प्रणाली को क्षेत्रीय डेटा प्रदान करेंगी। बीज परीक्षण और प्रमाणन को भी विशेष महत्व दिया गया है। केंद्र और राज्य सरकारें बीज परीक्षण प्रयोगशालाएँ स्थापित या मान्यता प्रदान कर सकती हैं, जहाँ प्रमाणित बीज विश्लेषक नमूनों का परीक्षण करेंगे। जो बीज राष्ट्रीय मानकों को पूरा करते हैं, उन्हें सरकारी, निजी या अंतरराष्ट्रीय मान्यता प्राप्त प्रमाणन संस्थाएँ प्रमाणित कर सकेंगी। इससे किसान को गुणवत्ता का भरोसा मिलता है और उद्योग को सुरक्षा। बीज आयात नियंत्रित लेकिन अनुमेय होंगे, और आयात के लिए पौध संगरोध आदेश, भारतीय मानक और निर्यातक देश के परीक्षण डेटा अनिवार्य होंगे। केवल अनुसंधान हेतु कम मात्रा में अपंजीकृत बीज भी आयात किए जा सकेंगे।

विधेयक के प्रावधानों के उल्लंघन पर दंड

बीज बिल 2025 का एक प्रमुख सुधार दंड प्रणाली का पुनर्गठन है, जो व्यापक अपराधीकरण के स्थान पर स्तरीकृत दंड व्यवस्था लागू करता है। लघु उल्लंघन (जैसे लेबलिंग त्रुटि, पंजीकरण एक वर्ष से कम समय पहले समाप्त होना) पर लिखित चेतावनी और छोटे जुर्माने होंगे, मध्यम उल्लंघन (जैसे गलत ब्रांडिंग, निम्न गुणवत्ता वाले बीज की बिक्री) पर ₹ 1–2 लाख आर्थिक दंड और गंभीर उल्लंघन (नकली बीज बेचना, अपंजीकृत किस्म बेचना, पंजीकरण के बिना संचालन) पर ₹ 10–30 आर्थिक लाख दंड और पुनरावृत्ति पर पंजीकरण निरस्तीकरण या कारावास। महत्वपूर्ण बात यह है कि जो किसान स्वयं अपने खेत में बीज बोते हैं, उन पर कोई दंड लागू नहीं होगा।

निष्कर्ष

समग्र रूप से, बीज बिल 2025 भारत के बीज क्षेत्र को अधिक पारदर्शी, वैज्ञानिक, किसान-केंद्रित और न्यायसंगत बनाने का व्यापक प्रयास है। प्रभावी क्रियान्वयन और मजबूत प्रशासनिक क्षमता के साथ यह अधिनियम निम्न गुणवत्ता वाले बीजों के प्रसार को रोक सकता है, फसल प्रदर्शन को बढ़ा सकता है, वास्तविक प्रजनन नवाचार को प्रोत्साहित कर सकता है और किसानों तथा बीज उद्योग के बीच विश्वास को सुदृढ़ कर सकता है। यह केवल एक विनियामक दस्तावेज नहीं, बल्कि भारत के कृषि भविष्य को अधिक लचीला और समृद्ध बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण आधार है, जहाँ हर किसान को गुणवत्तापूर्ण बीज और उसके वादे के अनुरूप परिणाम प्राप्त हो सकें। हालाँकि यह विधेयक अभी भी संसद में लंबित है और सरकार ने विभिन्न हितधारकों, कृषि विश्वविद्यालयों और बीज कंपनियों से इस पर राय मांगी है। इसलिए यह लेख किसानों को बीज विधेयक की विशेषताओं के बारे में जानकारी देने का एक प्रयास मात्र है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

भारत में अखरोट (Walnut) की उन्नत खेती

कल्लोल कुमार प्रमाणिक*, जितेन्द्र कुमार, संतोष वाटपाडे, पूजा देवी, मधु पटियाल, दीपक नेगी, राम सिंह एवं स्वरूप लाल

भा0 कृ0 अ0 प0 - भा0 कृ0 अनु स0, क्षे0 केन्द्र, शिमला

पत्राचारकर्ता: kallolpramanick1964@gmail.com

परिचय

अखरोट एक बहुवर्षीय, फलदार और अत्यंत लाभकारी सूखा मेवा फसल है। इसका वैज्ञानिक नाम Juglans regia है। अखरोट की खेती भारत में मुख्य रूप से पर्वतीय और शीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में की जाती है। अखरोट एक अत्यंत पौष्टिक, स्वादिष्ट और आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण सूखा मेवा है। भारत में इसकी खेती मुख्य रूप से ठंडे और पहाड़ी क्षेत्रों में की जाती है। अखरोट न केवल किसानों की आय बढ़ाने का एक अच्छा साधन है, बल्कि इसके औषधीय और पोषण संबंधी गुणों के कारण इसकी मांग देश-विदेश में लगातार बढ़ रही है। इसके फल, लकड़ी और औषधीय गुणों के कारण यह किसानों के लिए दीर्घकालीन आय का एक उत्कृष्ट साधन है।

अखरोट का महत्व

अखरोट में प्रोटीन, वसा, ओमेगा-3 फैटी एसिड, विटामिन और खनिज तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यह हृदय स्वास्थ्य के लिए लाभकारी माना जाता है तथा मस्तिष्क के विकास में भी सहायक होता है। आयुर्वेद में भी अखरोट का विशेष स्थान है। अखरोट को 'ड्राई फ्रूट्स का राजा' भी कहा जाता है। इसका पोषण मूल्य बहुत अधिक होता है।

- अखरोट में ओमेगा-3 फैटी एसिड, प्रोटीन, कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन, जिंक और विटामिन B तथा E पाए जाते हैं।
- यह हृदय रोग, डायबिटीज, मस्तिष्क विकास और तनाव कम करने में सहायक है।
- गर्भवती महिलाओं और बच्चों के लिए यह विशेष रूप से लाभकारी माना जाता है।
- अखरोट की लकड़ी का उपयोग फर्नीचर और सजावटी वस्तुओं में होता है,एवं हथियारों के बट निर्माण में होता है। जिससे अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।
- घरेलू उपयोग के साथ-साथ इसकी मांग निर्यात बाजार में भी बहुत अधिक है।

भारत में अखरोट उत्पादन क्षेत्र

भारत में अखरोट की खेती मुख्य रूप से निम्नलिखित राज्यों में की जाती है:

- जम्मू एवं कश्मीर (सबसे बड़ा उत्पादक)
- हिमाचल प्रदेश
- उत्तराखंड
- अरुणाचल प्रदेश

जम्मू-कश्मीर भारत के कुल अखरोट उत्पादन में प्रमुख योगदान देता है और यहां से अखरोट का निर्यात भी किया जाता है।

जलवायु और मिट्टी

अखरोट की खेती के लिए उपयुक्त जलवायु और मिट्टी का होना अत्यंत आवश्यक है।

जलवायु

- अखरोट को ठंडी और शीतोष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है।
- सर्दियों में पर्याप्त ठंड (८००–१५०० चिलिंग आवर्स ($\leq 7°C$)) फलन के लिए जरूरी होती है।
- अत्यधिक गर्मी और पाला फसल को नुकसान पहुंचा सकता है।

मिट्टी

- अच्छी जल निकासी वाली दोमट या बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है।
- भारी और जलभराव वाली मिट्टी अखरोट के लिए हानिकारक होती है।
- मिट्टी का pH मान ६.० से ७.५ के बीच होना चाहिए।
- भूमि गहरी और उपजाऊ होनी चाहिए क्योंकि अखरोट की जड़ें गहराई तक जाती हैं।

अखरोट की प्रमुख किस्में

अखरोट की किस्मों का चयन जलवायु, ऊँचाई, मिट्टी और बाजार की मांग के अनुसार किया जाता है। भारत में देशी और विदेशी-दोनों प्रकार की किस्में सफलतापूर्वक उगाई जाती हैं।

1. कागजी अखरोट

- सबसे लोकप्रिय और अधिक मांग वाली किस्म
- छिलका बहुत पतला होता है, आसानी से टूट जाता है
- गिरी सफेद और स्वादिष्ट होती है
- घरेलू बाजार और निर्यात दोनों के लिए उपयुक्त
- जम्मू-कश्मीर में व्यापक रूप से उगाई जाती है

2. जुगलांस रेजिया (Juglans regia)

- अखरोट की पारंपरिक और मूल प्रजाति
- बड़े आकार के पेड़, दीर्घायु
- फल मध्यम से बड़े आकार के
- ठंडी जलवायु के लिए उपयुक्त
- अधिकतर बीज से उगाई जाती है

3. चांडलर (Chandler)

- अमेरिका से विकसित उन्नत किस्म
- पतला छिलका और हल्के रंग की गिरी
- समान आकार के फल, उच्च गुणवत्ता
- जल्दी फल देने वाली (4–5 वर्ष में)
- निर्यात और व्यावसायिक खेती के लिए श्रेष्ठ

4. फ्रांकेट (Franquette)

- फ्रांस की प्रसिद्ध किस्म
- देर से फूल आने वाली, जिससे पाले का नुकसान कम होता है
- ठंडे क्षेत्रों के लिए अत्यंत उपयुक्त
- फल का आकार मध्यम, गुणवत्ता अच्छी
- परागणकर्ता (Pollinizer) के रूप में भी उपयोगी

5. हावर्ड (Howard)

- उच्च उत्पादन देने वाली किस्म
- पतला खोल और अच्छी गिरी
- मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में सफल
- व्यावसायिक बागानों के लिए उपयुक्त

6. हार्टले (Hartley)

- मजबूत और फैलावदार पेड़
- फल बड़े और आकर्षक
- गिरी हल्के रंग की
- लंबे समय तक भंडारण योग्य
- ठंडी जलवायु के लिए अनुकूल

7. सेर (Serr)

- शीघ्र फल देने वाली किस्म
- उच्च उपज क्षमता
- फल बड़े आकार के
- गर्म क्षेत्रों में भी अच्छी वृद्धि
- परागण के लिए अतिरिक्त किस्म की आवश्यकता

8. तुलारे (Tulare)

- मध्यम से बड़े फल
- छिलका पतला, तोड़ने में आसान
- औद्योगिक और व्यावसायिक खेती हेतु उपयुक्त
- नियमित और स्थिर उत्पादन

9. पायने (Payne)

- जल्दी पकने वाली किस्म
- मध्यम ठंड वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त
- फल का आकार मध्यम
- घरेलू बागवानी के लिए अच्छी

10. शिन (Shin)

- कोरिया की उन्नत किस्म
- उच्च उपज और अच्छी गुणवत्ता
- रोग प्रतिरोधक क्षमता बेहतर
- अनुसंधान और प्रयोगात्मक खेती में उपयोगी

11. कार्पेथियन अखरोट (Carpathian Walnut)

- अत्यधिक ठंड सहन करने वाली किस्म
- पर्वतीय और अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त
- बीज से उगाई जाती है
- दीर्घायु और मजबूत पेड़

12. स्थानीय / देशी किस्में

- स्थानीय जलवायु के अनुसार अनुकूलित
- कम देखभाल में भी उत्पादन
- बीज से उगाई जाती हैं
- गुणवत्ता में भिन्नता पाई जाती है

पूसा खोर (Pusa Khor)

पूसा खोर अखरोट की एक उन्नत भारतीय किस्म है, जिसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (IARI), पूसा, नई दिल्ली द्वारा विकसित किया गया है। यह किस्म विशेष रूप से भारतीय पर्वतीय परिस्थितियों को ध्यान में रखकर तैयार की गई है।

- यह किस्म मध्यम से अधिक ठंडी जलवायु के लिए उपयुक्त है।

- पेड़ की वृद्धि संतुलित होती है और शाखाएँ मजबूत होती हैं।
- फल आकार में मध्यम से बड़े होते हैं।
- छिलका अपेक्षाकृत पतला (सेमी-कागजी) होता है, जिससे अखरोट तोड़ना आसान होता है।
- गिरी का रंग हल्का तथा गुणवत्ता अच्छी होती है।
- उत्पादन नियमित और स्थिर रहता है।
- यह किस्म हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और जम्मू क्षेत्र में सफल पाई गई है।
- वैज्ञानिक देखरेख में उगाने पर यह किस्म व्यावसायिक खेती के लिए लाभकारी सिद्ध होती है।

CITH अखरोट किस्मों की विशेषताएँ

- CITH की किस्में स्थानीय जलवायु के अनुसार अनुकूलित होती हैं।
- ये किस्में उच्च गुणवत्ता, बेहतर गिरी प्रतिशत और अच्छी उपज देती हैं।
- रोगों और कीटों के प्रति अपेक्षाकृत अधिक सहनशील होती हैं।
- पर्वतीय क्षेत्रों में स्थिर उत्पादन के लिए उपयुक्त हैं।

प्रमुख CITH चयन / किस्में

(सामान्यतः इन्हें CITH Walnut एातमूदहे के नाम से जाना जाता है)

- CITH-W-01
- CITH-W-02
- CITH-W-03
- CITH-W-04

इन किस्मों की प्रमुख विशेषताएँः

- फल आकार में मध्यम से बड़े
- छिलका पतला और मजबूत
- गिरी हल्के रंग की और स्वादिष्ट
- कुछ किस्में जल्दी फल देने वाली होती हैं
- व्यावसायिक बागानों के लिए उपयुक्त

इन CITH किस्मों का उपयोग विशेष रूप से जम्मू-कश्मीर, लद्दाख और ऊँचाई वाले क्षेत्रों में किया जा रहा है।

- **कागजी अखरोटः** पतला छिलका, अधिक बाजार मांग
- **जुगलांस रेजियाः** पारंपरिक और व्यापक रूप से उगाई जाने वाली किस्म
- **चांडलर (Chandler):** अधिक उपज, समान आकार के फल, निर्यात के लिए उपयुक्त
- **हावर्ड (Howard) और फ्रांकेट (Franquette):** उन्नत विदेशी किस्में

उन्नत किस्में जल्दी फल देती हैं और उत्पादन भी अधिक होता है।

किस्म चयन में ध्यान देने योग्य बातें

- क्षेत्र की ठंड की अवधि (Chilling Hours)
- पाले की संभावना
- बाजार की मांग (कागजी अखरोट की अधिक मांग)
- निर्यात या घरेलू उपयोग
- परागण के लिए 2–3 किस्मों का संयोजन

Pusa Khor और CITH किस्मों का महत्व

- ये दोनों भारतीय परिस्थितियों में विकसित किस्में हैं, इसलिए विदेशी किस्मों की तुलना में अधिक अनुकूल होती हैं।
- आयातित किस्मों पर निर्भरता कम होती है।
- किसानों को स्थानीय स्तर पर प्रमाणित पौधे आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं।

किस्मों की तुलनात्मक तालिका (Comparison Table)

विशेषता	पूसा खोर	CITH किस्म	चांडलर
विकसित संस्थान	IARI, पूसा	CITH, श्रीनगर	USA
अनुकूल क्षेत्र	भारतीय पहाड़ी क्षेत्र	जम्मू-कश्मीर, लद्दाख	उच्च शीतोष्ण क्षेत्र
छिलका	सेमी-कागजी	पतला	पतला
गिरी का रंग	हल्का	हल्का	बहुत हल्का
फल देने की शुरुआत	2–3 वर्ष	5–6 वर्ष	4–5 वर्ष
उपज क्षमता	मध्यम–अधिक	अधिक	अधिक
व्यावसायिक उपयुक्तता	बहुत अच्छी	बहुत अच्छी	उत्कृष्ट
रोग सहनशीलता	अच्छी	अच्छी	मध्यम

- सरकारी योजनाओं और अनुसंधान परियोजनाओं में इन किस्मों को प्राथमिकता दी जाती है।

रोपण विधि

अखरोट का रोपण सही विधि से करना बहुत आवश्यक है।

- **रोपाई सामान्यतः** बीज या ग्राफ्टेड पौधों से की जाती है।
- ग्राफ्टेड पौधे जल्दी फल देना शुरू करते हैं, इसलिए इन्हें अधिक पसंद किया जाता है।
- रोपण का उचित समय दिसंबर से जनवरी होता है।
- 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे बनाकर उनमें गोबर की सड़ी खाद, मिट्टी और जैविक खाद मिलाई जाती है।
- पौधों के बीच 10×10 मीटर की दूरी रखी जाती है ताकि पेड़ों को पर्याप्त स्थान मिल सके।

खाद और सिंचाई प्रबंधन

खाद प्रबंधन

- प्रारंभिक वर्षों में जैविक खाद (गोबर खाद, वर्मी कंपोस्ट) का प्रयोग करें।
- फल देने वाले पेड़ों को नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश की संतुलित मात्रा दें।
- हर वर्ष खाद की मात्रा पेड़ की आयु के अनुसार बढ़ाई जाती है।

सिंचाई

- शुरुआती 3–4 वर्षों तक नियमित सिंचाई आवश्यक होती है।
- बाद में पेड़ गहरी जड़ें बना लेते हैं, जिससे सिंचाई की आवश्यकता कम हो जाती है।
- फूल आने और फल बनने के समय सिंचाई बहुत महत्वपूर्ण होती है।

रोग और कीट प्रबंधन

अखरोट में कुछ प्रमुख रोग और कीट पाए जाते हैं:

प्रमुख रोग

- **ब्लाइट रोगः** पत्तियों और फलों को नुकसान पहुंचाता है
- **जड़ सड़नः** अधिक नमी के कारण होता है।

कीट

- एफिड (चेपा)
- तना छेदक कीट

नियंत्रण उपाय

- समय-समय पर रोगग्रस्त भागों को हटाना।
- जैविक या अनुशंसित रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग
- उचित जल निकासी और साफ-सफाई

उत्पादन और कटाई

- अखरोट का पेड़ 8–10 वर्ष में फल देना शुरू करता है।
- 15–20 वर्ष में पूर्ण उत्पादन प्राप्त होता है।
- जब फल का बाहरी हरा छिलका फटने लगे, तब कटाई की जाती है।
- कटाई के बाद अखरोट को साफ करके धूप में सुखाया जाता है।
- सही तरीके से सुखाए गए अखरोट लंबे समय तक सुरक्षित रहते हैं।

आर्थिक लाभ

- अखरोट की खेती एक दीर्घकालिक निवेश है।
- एक परिपक्व पेड़ से 30–50 किलोग्राम तक अखरोट प्राप्त किया जा सकता है।
- बाजार में अखरोट की कीमत अधिक होने के कारण मुनाफा अच्छा होता है।
- फल के साथ-साथ लकड़ी से भी अतिरिक्त आय मिलती है।
- सरकारी योजनाओं और सब्सिडी से लागत कम की जा सकती है।

निष्कर्ष

भारत में अखरोट की खेती की संभावनाएं अत्यंत उज्ज्वल हैं, विशेषकर पर्वतीय क्षेत्रों में। यदि किसान वैज्ञानिक विधियों, उन्नत किस्मों और उचित प्रबंधन को अपनाएं, तो अखरोट की खेती से स्थायी और उच्च आय प्राप्त की जा सकती है। यह न केवल किसानों की आर्थिक स्थिति मजबूत करती है, बल्कि देश के कृषि निर्यात को भी बढ़ावा देती है।

अखरोट की सही किस्म का चयन सफल खेती की कुंजी है। उन्नत और ग्राफ्टेड किस्मों को अपनाकर किसान कम समय में अधिक उत्पादन और बेहतर गुणवत्ता प्राप्त कर सकते हैं। स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार किस्मों का चयन करने से जोखिम कम होता है और लाभ अधिक मिलता है।

Pusa Khor और CITH द्वारा विकसित अखरोट की किस्में भारत में अखरोट उत्पादन को वैज्ञानिक और आत्मनिर्भर दिशा में ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। सही क्षेत्र में इन किस्मों का चयन कर किसान बेहतर उपज, गुणवत्ता और लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

प्रमुख फूलों के रोग, कीट एवं उनका प्रबंधन

फूल सिंह मरकाम[1]*, प्रदीप कुमार बढ़ाई[2] एवं एन. के. रस्तोगी[3]

[1]उद्यानिकी विभाग, [2]पादप रोग विज्ञान विभाग एवं [3]आनुवंशिकी और पादप प्रजनन
रामप्रसाद पोटाई कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र, कांकेर, छत्तीसगढ़

पत्राचारकर्ता: markamphoolsingh@gmail.com

परिचय

किसी भी पौधे की अच्छी वृद्धि और अधिक उत्पादन पाने के लिए केवल बीज बोना या रोपाई करना ही पर्याप्त नहीं होता, बल्कि समय समय पर पौधों की उचित देखभाल भी जरूरी होती है। पोधो में लगने वाले रोगो के कारण बहुत क्षति होती है। खेती और बागवानी में कई तरह की तकनीकें अपनायी जाती हैं, जिनसे पौधों की वृद्धि, फूलों की संख्या और गुणवत्ता बेहतर बनायी जा सकती है। इन्हीं में से एक बहुत ही सरल और प्रभावी तकनीक है पिंचिंग (Pinching)। फूलों का हमारा जीवन में बहुत महत्व है। फूलों का प्रयोग सजावट, पूजा के रूप में और साथ ही साथ औषधि के रूप में किया जाता है इसलिये फूलों की मांग वर्षभर बाजार में बानी रहती है।

गुलाब

गुलाब के पौधे में लगने वाले प्रमुख रोग

क. काला धब्बारोग

लक्षणः यह रोग *डिप्लोकार्पन रोजी* नामक फफूंद द्वारा होता है जिससे पत्तियों पर छोटे व गोल गहरे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जिनके किनारे झालर नुमा होते हैं। धब्बों के चारों ओर का क्षेत्र पीला पड़ जाता है। अधिक संक्रमण से छोटे-छोटे धब्बे जुड़कर पत्तों का अधिकतम क्षेत्र घेर लेते हैं और परिणाम स्वरूप रोग ग्रस्त पत्तियाँ पीली हो कर झड़ने लगती हैं।

प्रबंधनः रोग ग्रस्त पत्तों को इकट्ठा करके जलादें ताकि रोगकारक फफूँद जो पत्तों में विद्यमान रहती है, समाप्त हो जाए। धूप वाली जगह पर गुलाब लगाने से बचे, पौधों की आपसी दूरी उचित रखे, ऊपर से सिंचाई करने से बचे, संतुलित उर्वरक का प्रयोग करे। रोग के लक्षण प्रकट होते ही पत्तों पर एजोक्सीस्ट्रोबिन और डिफेनोकोनाजोल (1मिलीलीटर प्रति लीटर पानी) या ट्राइफ्लॉक्सीस्ट्रोबिन और टेबुकोनाजोल (0.5ग्राम प्रति लीटर पानी) 10 से 15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करें। उपरोक्त दवाइयों आवश्यकतानुसार रोटेशन में प्रयोग करें।

सफेद चूर्णी रोग

लक्षणः यह रोग *पोडोस्फेरा पैनोसा* नामक फफूंद द्वारा होता है जो गुलाब की कलियों और पत्तियों की सतह पर बहुत महीन, सफेद चूर्ण जैसी परत बना देता है। रोग के गंभीर प्रकोप में तने तथा विशेष रूप से कांटे भी संक्रमित हो जाते हैं। कोमल पत्तियों और कलियों पर आक्रमण होने से वे विकृत हो जाती हैं तथा पौधे की वृद्धि रुक जाती है। संक्रमित कलियाँ खुल नहीं पातीं। यह रोग सामान्यतः गर्म एवं आर्द्र मौसम में अधिक फैलता है। कवक के बीजाणु टहनियों तथा गिरी हुई संक्रमित पत्तियों पर शीतकाल (सर्दी) में जीवित रहते हैं और

अनुकूल परिस्थितियाँ मिलने पर पुनः रोग फैलाते हैं।

प्रबंधनः संक्रमित शाखाओं की मौसम के अंत में छंटाई कर उन्हें जला दें क्योंकि रोग कारक फफूँद कलियों में विद्यमान रहती हैं और जलाने से नष्ट हो जाती हैं। रोग के लक्षण दिखते ही पौधों पर घुलनशील सल्फर (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) हेक्साकोनाजोल या प्रोपिकोनाजोल (1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी) या एजोक्सीस्ट्रोबिन + डिफेनोकोनाजोल (1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी) या ट्राइफ्लॉक्सीस्ट्रोबिन + टेबुकोनाजोल (0.5 ग्राम प्रति लीटर पानी) का 10 से 15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करें। उपरोक्त दवाइयों को आवश्यकतानुसार बदल बदल कर प्रयोग करें।

'ग्रे' या स्लेटी फफूँद रोग

लक्षणः यह रोग' *बौट्राइटिस साएनेरिया*' नामक फफूँद द्वारा होता है। इस रोग से मुख्यतः फूल प्रभावित होते हैं। कलियां खिलने से पहले ही भूरी हो कर सड़ जाती है जिससे फूलों का खिलना रूक जाता है। प्रभावित फूलों की पखुड़ियों पर छोटे-छोटे, गोल भूरे रंग के धब्बे पड़ते हैं जिससे पंखुड़ियां भूरी होकर सिकुड़ जाती हैं। प्रभावित भाग फफूँद के सलेटी रंग के जाल से ढक जाते हैं और उनमें बड़ी मात्रा में फफूँदो के बीजाणु बनते हैं जिससे संक्रमण तेजी से फैलता है। यह रोग फूलों के भण्डारण व मण्डी पहुँचने तक भी प्रभावित करता है जिससे उनकी गुणवत्ता पर बुरा असर पड़ता है।

प्रबंधनः इस रोग की रोकथाम के लिए रोग ग्रस्त पत्तियों, कलियों या नीचे गिरे पौधे के अवशेषों को हटा कर नष्ट कर दें। ऊपर से सिंचाई न करें, सुबह सिंचाई करें। मुरझाए हुए फूल समय-समय पर हटा दें। रोग के लक्षण दिखते ही मैनकोजेब 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी या फेन्हेक्सामिड 1 ग्राम प्रति लीटर पानी या सायप्रोडिनिल + फ्लूडिओक्सोनिल (संयोजन) का 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बना कर छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर 10 से 12 दिनों के अंतराल पर पुनः छिड़काव करें।

गुलाब के पोधो में लगने वाले प्रमुख कीट

क) माहू (एफिड)

पहचान एवं लक्षणः यह कीट गुलाब के हरे रंग के पत्ते का रस चूसने वाले छोटे - छोटे कीट हैं। इस कीट के शिशु एवं व्यस्क समूहों में नई कोम्पलें एवं कलियों से रस चूसते है। फल स्वरूप कलियां ठीक से खिल नहीं पाती तथा पौधा भी कमजोर पड़ जाता है। अधिक आक्रमण की अवस्था में कलियां मुरझा जाती हैं।

प्रबंधनः अत्यधिक नाइट्रोजन उर्वरक का प्रयोग न करें चूँ कि नाइट्रोजन के अधिक प्रयोग से माहू तेजी से बढ़ते हैं। कुछ पर भक्षीमित्र कीट जैसे लेडीबर्ड बीटल, क्राइसोपा, सिरफिड मक्खी इत्यादि इस कीट को खाते हैं तथा कुछ हद तक इसे प्राकृतिक नियंत्रण में रखते है। पानी की तेज धार से माहू हटाए जा सकते हैं (हल्के प्रकोप में)। नीमतेल 3.5 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या अजाडिरैक्टिन 3 मिली लीटर प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। अधिक आक्रमण की अवस्था में इमिडाक्लोप्रिड (0.3 मिली प्रति लीटर पानी) याथा या मेथोक्साम (0.25 ग्राम प्रति लीटर) या एसिटा मिप्रिड (0.2 ग्राम प्रति लीटर) की दर से घोल बना कर छिड़काव करें। एक ही कीटनाशी का बार-बार प्रयोग न करें।

ख) आरा मक्खी

पहचान एवं लक्षणः यह मक्खी लगभग एक सेंमी लम्बी होती है तथा इसका शरीर पीले से संतरी रंग का होता है। मादा मक्खी अपने शरीर के आखिरी भाग में आरे के समान यंत्र से

गुलाब के तलने तथा शाखाओं में अण्डे देने के लिए जगह बनाती हैं। वह भाग बाद में फट जाता है। इन अण्डों से हरे रंग जा की सुंडी या जिनका सिर काला होता है, पत्तों को खाना शुरू कर देती हैं। इन सुंडियो को पत्तियों की निचली सतह पर झुण्डों में देखा जा सकता है। अधिक आक्रमण की अवस्था में पूरा पौधा ही पत्ता हीन हो जाता है। इस कीट का अधिक आक्रमण जुलाई से सितम्बर माह तक होला है।

प्रबंधन: शुरू में सुंडियो को एकत्र कर नष्ट कर दे। *बेसिल सथुरिंजेंसिस* 1-1.5 ग्राम प्रति लीटर पानी (छोटे लार्वा पर अधिक प्रभावी)। नीम तेल 3.5 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या अजाडिरैक्टिन 3 मिली लीटर प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। बाद में क्वीनलफास या क्लोरपायरीफॉस 2 मिली लीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। पत्तियों की ऊपरी व निचली दोनों सतह पर छिड़काव करें। एक ही कीटनाशी का बार-बार प्रयोग न करें (रोटेशन अपनाएँ)।

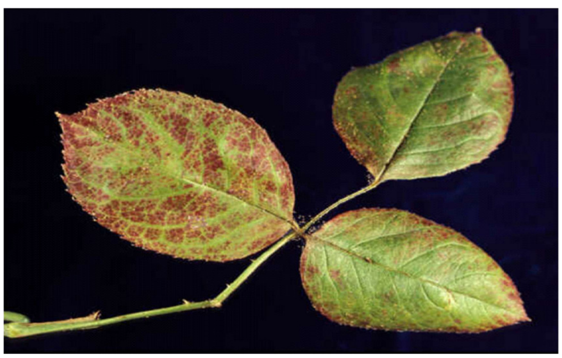

ग) माईट

पहचान एवं लक्षण: यह आठ टाँग वाले मकड़ी प्रजाति के छोटे-छोटे रस चूसने वाले जीव हैं। जो विभिन्न प्रकार के फूलों जैसे कार नेशन, गुलाब, गैंदा तथा ग्लैडियोलस इत्यादि पर आक्रमण करते हैं। यह सैंकड़ों की संख्या में पत्तियों एवं कलियों से रस चूसती है। पहले पत्तियां हल्के हरे रंग की तथा बाद में ताँबे नुमा हो जाती है। यह पौधों में जाला बना देती है। पौधा कमजोर पड़ जाता है तथा फूल ठीक से खिल नहीं पाते। शुष्क मौसम में इसका अधिक आक्रमण होता है।

प्रबंधन: प्रभावित पौधों पर डाइकोफॉल 2 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या स्पाइरोमेसिफेन 0.5 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या प्रोपरजाइट 1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। नियंत्रित नहीं होने पर 10 दिन बाद उपरोक्त कीटनाशकों में से किसी एक कीटनाशक का पुनः छिड़काव करें। पत्तियों की निचली सतह पर छिड़काव अनिवार्य रूप से

कार्नेशन में लगने वाले प्रमुख रोग

क) मुर्झान रोग

लक्षण: यह रोग *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम* उप प्रजाति *डिएन्थी* नामक फफूँद द्वारा होता है। इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पौधे के निचले भाग में दिखाई देते हैं। तने का भाग जो भूमि की सतह के सम्पर्क में होता है, गल कर नरम पड़ जाता है जिससे पौधा भूमि से आसानी से उखाड़ा जा सकता है। रोग के प्रभाव से जड़ें सड़ने लगती हैं जिसके परिणाम स्वरूप पत्तियाँ पीली होकर सूख जाती हैं और पौधा धीरे-धीरे मर जाता है।

प्रबंध: रोगमुक्त पौध सामग्री अर्थात कलमों का उपयोग करना चाहिए। पौधों की कलमें रोगाणुमुक्त मृदा में ही तैयार करें। लम्बे फसल चक्र अपनाएं। रोग-ग्रस्त पौधों को जलाकर नष्ट कर दें। सौरऊर्जा से भूमि का उपचार भी लाभप्रद है। *ट्राइकोडर्मा हारजीऐनम* या *ट्राइकोडर्मा विरिडी* 4-5 किग्रा प्रति एकड़ (गोबर खाद या कम्पोस्ट में मिलाकर) उपयोग करें। इसके अतिरिक्त रोग के लक्षण दिखने पर तने के आस-पास कार्बण्डाजिम 1ग्राम प्रति

लीटर पानी में घोल बना कर सिंचाई करें। आवश्यकतानुसार 10-15 दिन के अंतराल पर 2-3 बार ड्रेंचिंग करें।

कली छेदक कीट

पहचान एवं लक्षण: यह एक बहुभक्षी कीट है जो कारनेशन

के अतिरिक्त गुलाब, ग्लेडियोलस तथा अन्य बहुत सी फसलों पर आक्रमण करता है। इस कीट का व्यस्क एक भूरे रंग का पतंगा होता है, जिसके ऊपर वाले पंखों पर काला निशान पड़ा होता है। इस कीट की मादा कलियों पर हर पीले रंग के अण्डे देती है तथा उन से सुण्डियां निकल कर कली में छिद्र कर भीतर प्रवेश करती हैं। यह सुण्डियां केवल अपने शरीर का एक-तिहाई हिस्सा कली के अन्दर डालती है तथा शेष दो-तिहाई भाग बाहर रहता है। प्रभावित कली खिल नहीं पाती तथा फूल बेचने योग्य नहीं रहता। इस कीट का प्रकोप मुख्यतः आक्रमण मार्च जून तक होता है।

प्रबंधनः शुरू में सुंडियो को एकत्र कर नष्ट कर दे। *बेसिलस थुरिंजेंसिस* 1-1.5 ग्राम प्रति लीटर पानी (छोटे लार्वा पर अधिक प्रभावी)। नीम तेल 3.5 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या अजाडिरैक्टिन 3 मिली लीटर प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। इमामेक्टिनबेंजोएट 0.4 ग्राम लीटर प्रति लीटर पानी या इंडोक्साकार्ब 0.5 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या क्लोरान्ट्रानिलिप्रोल 0.3 मिली लीटर प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। 7-10 दिन के अंतराल पर पुनः छिड़काव करें। अंडे या छोटे लार्वा की अवस्था में छिड़काव करें।

ग्लैडियोलस में लगने वाले प्रमुख रोग

मुर्झानरोग

लक्षणः इस रोग का मुख्य लक्षण पत्ते की नोक के अन्तर्धारीय क्षेत्र का पीला पन होना है जो नीचे की ओर बढ़ता हुआ पूरे पत्ते पर फैल जाता है और पत्ता बाद में भूरा होकर सूख जाता है। अन्य लक्षणों में पौधों की वृद्धि का रुकना, पत्तों का चाप की तरह मुड़ जाना व झुकना शामिल हैं। अन्ततः पौधा मुर्झा कर पीला पड़ जाता है और समय से पहले ही मर जाता है। इस रोग से प्रभावित पौधा बड़ी आसानी से भूमि से निकाला जा सकता है। घनकन्द यानि 'कॉर्म' से निकलने वाली जड़ों पर भी भूरे रंग के धब्बे देखे जा सकते हैं। घन कन्द पर लाल भूरे रंग के, दबे हुए, गोल या अण्डाकार धब्बे भी दिखाई देते हैं जिसके फलस्वरूप धनकंद सिकुड़ कर सख्त हो जाता है। यह रोग '*फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम*' उपप्रजाति '*ग्लैडियोलाई*' नामक फफूँद से होता है।

प्रबंधनः आधुनिक कृषि पद्धतियां जैसे, सौर ऊर्जा से भूमि का उपचार, फसल चक्र, घनकन्दो का फफूंद नाशकों में उपचार जैसे तरीके इस रोग के नियंत्रण में लाभ प्रसिद्ध हुए हैं। इसके अतिरिक्त रोग ग्रस्त पौधों को निकाल कर नष्ट करना, पानी को खेत में न रुकने देना भी धनकद सड़न रोग रोकने में सहायक है। *ट्राइकोडर्मा हारजीऐनम* या *ट्राइकोडर्मा विरिडी* 4.5 किग्रा प्रति एकड़ गोबर खाद या कम्पोस्ट में मिला कर उपयोग करें। इसके अलावा धनकंदों का 'सॉफ' (काबेंडाजिम + मैन्कोजेब) या 'क्वींटल' (काबेंडाजिम + आईप्रोडिन) का 250 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी के घोल में 30 मिनट तक उपचार करने के बाद 40 दिनों तक सफेद पार दर्शी पॉलीथीन (100 गेज मोटा) से पहले गर्मियों में ढकी हुई भूमी में लगाने से इस रोग का नियंत्रण हो जाता है। इसके अलावा फिर भी रोग के लक्षण दिखाई दें तो 'काबेंडाजिम' (100 ग्राम) या 'सॉफ' (200 ग्राम) या 'क्वींटल' (200 ग्राम) का प्रति 100 लीटर पानी में घोल बना कर प्रभावित पौधों की ट्रेंचिंग करें। धनकन्दों को खेत से निकालने के बाद आधे घण्टे तक ऊपर लिखी हुई किसी भी फफूंद नाशक में डुबोकर, सुखा लें और फिर भण्डारण करें।

थ्रिप्स

पहचान एवं लक्षणः यह एक छोटा सारस चूसने बाला कीट है। इसके शिशु पीले रंग के तथा व्यस्क काले रंग के होते हैं। यह पत्तियों एवं स्पाईक से रस चूसते है। परिणाम स्वरूप पत्तियों तथा स्पाईकॉपर चाँदी नुमा धब्बे पड़ जाते हैं जो बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं। पौधा कमजोर पड़ जाता है तथा फूल की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। यह कीट घनकन्दो

ISSN No. 2583-3316

(कॉर्म) को भी प्रभावित करते हैं।

प्रबन्धन: घनकन्दो को 20°C पर 4-6 सप्ताह भंडारित करें तथा रोपण से पूर्व 46°C गरम पानी में 15 मिनट उपचार करें। खेत में प्रकोप की स्थिति में फिप्रोनिल 1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या इमिडाक्लोप्रिड 0.3 मिली लीटर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

गेंदा

पत्तीधब्बा रोग (‘*अल्टरनेरिया टैजेटिका*’ तथा अन्य प्रजातियां जैसे ‘*अल्टरनेरियाजीनाई*’, ‘*अल्टरनेरिया अल्टरनाटा*’)

लक्षण: पत्तियों पर छोटे, अण्डाकार, काले भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। समय के साथ धब्बे आकार में बढ़ते जाते हैं। वातावरण में नमी होने पर संक्रमण बहुत तेजी से फैलता है। अधिक संक्रमण से फूलो या बीजो की पैदावार घट जाती है। इस रोग का संक्रमण पौधों में निचली पत्तियों से शुरू होकर ऊपर की तरफ बढ़ता है।

रोकथाम: रोग के लक्षण आने पर रोगग्रस्त पत्तियाँ एवं पौधे निकाल कर नष्ट करें। रोगमुक्त बीज या पौध सामग्री का उपयोग करें। कार्बेन्डाजिम + मैनकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी या एजोक्सीस्ट्रोबिन + डिफेनोकोनाजोल 1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें। भूमि में पिछली फसल के बचे हुए अवशेषों को नष्ट करके भी रोग की तीव्रता कम की जा सकती है।

थ्रिप्स

पहचान एवं लक्षणः यह छोटे-छोटे कीट पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते हैं। परिणाम स्वरूप पत्तियों की ऊपरी सतह पर छोटे छोटे सफेद धब्बे पड़ जाते हैं। बाद में पत्तियां सूख जाती हैं तथा फूलों की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है।

प्रबंधनः खेत को खरपतवार - मुक्त रखें। पौधों की आपसी दूरी उचित रखें। नीले चिपचिपे ट्रैप 10-12 नग प्रति एकड़ लगाएँ। नीमतेल 3-5 मिली लीटर प्रतिलीटर पानी या अजाडिरैक्टिन 3 मिली लीटर प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। फिप्रोनिल 1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या इमिडाक्लोप्रिड 0.3 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या थायामेथोक्साम 0.25 ग्राम प्रति लीटर पानी घोल बनाकर छिड़काव करें। यदि आवश्यकता होतो 15 दिन बाद पुनः छिड़काव करें। उपरोक्त दवाइयों को आवश्यकतानुसार बदल बदल कर प्रयोग करें।

निष्कर्ष

फूलों में कीट एवं रोग प्रबंधन फूल उत्पादन तकनीक की एक आवश्यक कृषि क्रिया है। उचित समय में कीट एवं रोग नियंत्रण करने से उच्च गुणवत्ता के फूल प्राप्त कर सकते है तथा प्रति हेक्टेयर अधिक उत्पादन के साथ-साथ प्रति हेक्टेयर अधिक आय प्राप्त कर सकते हैं। अतः किसान भाइयों को यह सलाह दी जाती है की फूलों की खेत में कीट एवं रोग का प्रकोप होने पर किसी उद्यानिकी विशेषज्ञ से सलाह लेकर उचित समय पर नियंत्रण के उपाय करना चाहिए।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

चना फसल की खेती विधियांः प्राकृतिक, जैविक एवं परंपरागत

गौरव शुक्ला* एवं जगन्नाथ पाठक

मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बाँदा, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: shuklagaurav48455@gmail.com

परिचय

प्राकृतिक खेती- प्राकृतिक खेती वह खेती है, जिसमें फसलों पर किसी भी प्रकार का रासायनिक कीटनाशक एवं उर्वरक का प्रयोग नहीं किया जाता है। सिर्फ प्राकृतिक रूप में प्रकृति द्वारा दी गई निर्मित खाद और अन्य पेड़ पौधो के पत्ते को खाद, पशुपालन, गोबर खाद को उपयोग में लाया जाता है। जो फसलों और जीव-जन्तुकों एवं पेड़ों को एकीकृत करके रखती है।

जैविक खेती- जैविक खेती कृषि की वह पद्धति है। जिसमें पर्यावरण के प्राकृतिक संतुलन को बनाये रखते हुए भूमि, जल एवं वायु को प्रदूषित किए बिना दीर्घकालीन तथा स्थिर उत्पादन प्राप्त किया जाता है। यह पद्धति परंपरागत कृषि की अपेक्षा सस्ती, स्वावलम्बी एवं चिर स्थायी है इसमें मृदा को एक जीवित माध्यम माना जाता है जैविक खेती से लक्षित कृषि उत्पादन प्राप्त करते हुए प्रकृति की संपदा, मृदा, जीवांश, जल एवं वायुमण्डल के जीवो में सांमजस्य स्थापित किया जाता है।

परपरागत खेती- यह वह खेती है। जिसमे मिट्टी को पोषक तत्व देने के लिए हमने प्रकृति के धैर्य को दरकिनार कर प्रयोगशालाओं में बने तत्वों को सीधे खेतों में पहुँचाया। रासायनिक खेती का आरंभ तब हुआ जब मनुष्य ने प्रकृति की गति से तेज चलने की ठानी। बीजों की आत्मा को रासायनों से जगाने की कोशिश की, मिट्टी की जीवंतता को तेज उत्पादन की कीमत पर गिरवी रख दिया। अब समय है कि रासायनिक खेती से प्राप्त अनुभवों परिणामों को आधार बनाकर हम एक नई खेती दर्शन की ओर बढें। जहाँ उत्पादन और पर्यावरण दोनो की सेहत साथ चलें।

	परंपरागत खेती	जैविक खेती	प्राकृतिक खेती
बीजा दर	35-40 किग्रा०/एकड	40-45 किग्रा०/एकड	30-35 किग्रा०/एकड
बीज शोधन	कार्बेन्डाजिम (2.5ग्रा./किग्रा. बीज	राइजोबियम कल्चर (चना विशेष 25ग्रा०/किग्रा0 बीज)	200-250एमएल/किग्रा0 बीजामृत
खेत की तैयारी	2-3 जुताई + पाटा	भुरभुरी मिटटी	भुरभुरी मिटटी
खाद या उर्वरक	उर्वरक	वर्मीकम्पोस्ट	FYM या गोबर की खाद नाडेप कम्पोस्ट
बुवाई का समय	अक्टूबर - नवम्बर	अक्टूबर - नवम्बर	अक्टूबर - नवम्बर
बुवाई की विधि	कतार, 30सेमी०, पौधा की दूरी, 30सेमी०, गहराई, 5 सेमी०	कतार, 30सेमी०, पौधा की दूरी, 30सेमी०, गहराई, 5सेमी०	कतार, 30सेमी०, पौधा की दूरी, 30सेमी०,गहराई, 5 सेमी०

	परंपरागत उर्वरक	जैविक खाद या जैव उर्वरक	प्राकृतिक खाद
खाद एवं उर्वरक प्रबंधन	20-30किग्रा0/एकड यूरिया, 50किग्रा0 डीएपी/एकड तथा 20-25किग्रा0/एकड एम. ओ. पी. बुवाई के समय में प्रयोग करें। और 20-25 किग्रा0/एकड	5-6 टन/एकड वर्मीकम्पोस्ट, 2-3 टन/एकड नाडेप कम्पोस्ट और 50-60 किग्रा0/एकड नीम खली, राइजोवियम + पी.एस.पी 1-2 किग्रा0/एकड बुवाई के	जीवामृत का प्रयोग मिट्टी में जुताई के साथ एवं बाद में जीवामृत 200ली हर 15 दिन में एक बार सिंचाई के साथ या छिडकाव करें। घन जीवामृत (100किलो) बुवाई के साम में डाल

	परंपरागत उर्वरक	जैविक खाद या जैव उर्वरक	प्राकृतिक खाद
	यूरिया का प्रयोग सिंचाई के बाद करें। 3-4 बार (बुआई के बाद फूल आने पर फली भरने पर कटाई से पहले)	समय में प्रयोग करें। तथा वर्मीवाश का छिडकाव सिंचाई के बाद करें।	घन जीवामृत का प्रयोग मिट्टी में जुताई के साथ एवं बाद में भी कृषि चुनैतियों से निपटने के लिए इस्तेमाल आज की
सिंचाई	3-4 बार (बुआई के बाद फूल आने पर फली भरने पर कटाई से पहले)	2-3 बार फूल आने पर, फली बनते समय जरूरत के अनुसार	1-2 बहुत सूखा पडे तो हल्की सिंचाई
खरपतवार नियंत्रण	पेडामिथाइलिन 1ली/एकड	हाथ से निराई	हाथ से निराई
कीटनाशक	इमिडाक्लोप्रिड -3-5 डस/ली, मोनोक्रोटोफॉस-1-1.5 डस/ली, क्लोरपायरीफॉस-1-1.5 डस/ली	नीम के तेल लहसुन, मिर्च घोल 50 डस/1.5ली जैव कीटनाशक बेवरिया बेसियाना	नीमास्त्र या ब्रह्मास्त्र (अंकुरण के बाद 15-20दिन पर) जीवामृत + नीम आधारित स्प्रे फल फूल बनते समय
रोग नियंत्रण	कार्बेन्डाजिम, मैनकोजेब	जैविक फफूंद नाशी जैसे ट्राइकोडर्मा, गोमूत्र अर्क	गौ मूत्र 5% छिडकाव जीवामृत
कटाई	80-90% फलियाँ पकजाएँ फरवरी- मार्च	जब पौधे पीले और फलियाँ सूख जायें हाथ से कटाई	जब फली सूखने लगे हाथ से काटें
अंतिक कटाई	110 -120 दिन	110 -120 दिन	120 दिन
लागत रू प्रति एकड	6000 -8000	4000 - 5000	2000 - 3000
पानी की आवश्यकता	100 - 1200 मि0 मी0	70 -90 मि0 मी0	40 -60 मि0 मी0
उत्पादन औसत बाँदा, महोबा	10-12 क्विंटल/एकड	08-10 क्विंटल/एकड	07-09 क्विंटल/एकड
फसल लागत बनाम लाभ	उत्पादन अधिक पर लागत अधिक	उत्पादन ठीक लाभ मध्यम लाभ अधिक	उत्पादन थोडा पर लागत बहुत कम
मिट्टी पर प्रभाव	उर्वरता घटती रासायनिक अवशेष बढते	धीरे-धीरे मिट्टी सुधरती	मिट्टी की जैविक शक्ति सूक्ष्म जीव व नमी क्षमता बढती
पर्यावरण प्रभाव	जल प्रदूषण मिट्टी अम्लीय	संतुलित	पर्यावरण अनुकूल कीटनाशक मुक्त
फायदेमंद जीव जन्तु	नष्ट हो जाते हैं	कुछ बढते है	पूरी तरह संरक्षित रहतें हैं
फसल गुणवत्ता	चमकीली लेकिन रसायनिक अवशेष युक्त	पौष्टिक, स्वादिष्ट	उच्चपौष्टिक,स्वादिष्ट व सुरक्षित
दीर्घकालीन प्रभाव	मिट्टी बंजर होने की संभावना	धीरे - धीरे सुधार	भूमि स्थायी रूप से उर्वरक होती है
मिट्टी का प्रकार	मध्यम काली, हल्की दोमट		

प्राकृतिक खेती के अवयव

मृदा की उर्वरता व मिट्टी सुधार के लिए उपयोग होने वाली प्रमुख अवयव

(1) बीजामृत (2) जीवामृत (3) घनजीवामृत (4) अमृत जल (5) पंचगब्य

कीट-नियंत्रण के उपयोग होने वाले अवगव

(1) नीमास्त्र (2) अग्निआस्त्र
(3) बह्मास्त्र (4) तंबाकू अर्क
(5) लहसुन र्मिच अर्क (6) वनस्पतिक धोल

(7) दशपर्णी अर्क (8) वीयस्ति या वारास्त्र

प्राकृतिक खेती में उपगोग होने वाले अवयव को तैयार करने में आवश्यक सामाग्री/एकड

बीजामृत

सामाग्री	मात्रा
देशी गाय का गोबर	05 किग्रा0
देशी गाय का मूत्र	05 ली0
पानी	20 ली0
चूना	50 ग्राम
मिट्टी अधिक जीवांश वाला (पीपल या वरगद पेड़ के नीचे की)	50 ग्राम

जीवामृत

सामाग्री	मात्रा
देशी गाय का गोबर	10 किग्रा0
देशी गाय का मूत्र	05-10 ली0
पानी	200 ली0
गुड	1 किग्रा0
बेसन या किसी भी दहलन का आटा	1 किग्रा0
मिट्टी (खेत की या पीपल/वरगद पेड़ के नीचे की)	50ग्राम

धन जीवामृत

सामाग्री	मात्रा
देशी गाय का गोबर	100 किग्रा0
देशी गाय का मूत्र	05 ली0
गुड	2 किग्रा0
बेसन या किसी भी दहलन का आटा	2 किग्रा0
मिट्टी (खेत की या पीपल/वरगद पेड़ के नीचे की)	1 किग्रा0

अमृत जल

सामाग्री	मात्रा
देशी गाय का ताजा गोबर	10 किग्रा0
देशी गाय का गौमूत्र	05 से 10 ली0
गुड	1 किग्रा0
बेसन	1 किग्रा0
पानी	200 ली0

पंचगव्य

सामाग्री	मात्रा
देशी गाय का ताजा गोबर	5 किग्रा0
देशी गाय का गौमूत्र	3 ली0
दूध	2 ली0
दही	2 ली0/किग्रा0
घी	1 किग्रा0

कीट- नियंत्रण के सात अवयव

नीमास्त्र

सामाग्री	मात्रा
देशी गाय का गोबर	1 किग्रा0
देशी गाय का गौमूत्र	05 ली0
पानी	100 ली0
नीम की हरी पत्तियाँ/सूखे फल	05किग्रा0

अग्निआस्त्र

सामाग्री	मात्रा
देशी गाय का गौमूत्र	20 ली0
नीम के पत्ते	5 किग्रा0
तम्बाकू पाउडर	500 ग्रा0
तीखी हरी मिर्च की चटनी	500 ग्रा0
देशी लहसुन की चटनी	500 ग्रा0

प्राकृतिक कृषि के अवयवों का चना फसल में प्रयोग का समय एवं प्रभाव

दिन	अवयव/उपचार	उद्देश्य
0	बीजामृत	बीज सुरक्षा
10	जीवामृत/घनजीवामृत	जड मजबूती
15-20	वनस्पति घोल	शुरूवाती रोग नियंत्रण
20-25	अमृत जल + जीवामृत	वृद्वि बूस्ट
25-30	नीमास्त्र	मांहू/फुदका
35-40	ब्रह्मास्त्र + पंचगव्य	फूल सेट
45-50	अग्नास्त्र + तंबाकू अर्क	इल्ली नियंत्रण
55-60	दृष्पादनी अर्क + गौमूत्र	फली + रोग रोकथाम
65-70	जेवामृत + वायरास्त्र	अतिंम सुरक्षा

निष्कर्ष

बाँदा और महोबा अर्ध शुष्क क्षेत्र प्राकृतिक खेती सबसे टिकाऊ और कम लागत वाली है। जैविक खेती बेहतर विकल्प है यदि गोबर व जैविक कल्चर उपलब्ध हों। रासायनिक खेती केवल अल्पकालीन अधिक उत्पादन देती है पर मिट्टी की सेहत को नुकसान पहुंचाती है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

जैव-संवर्धित बेरः कुपोषण के खिलाफ एक प्राकृतिक साथी

सतपाल[1] , शिव नारायण धाकड़[2] , ताज़ीम फ़ातमा जाफ़री[3]* एवं प्रमिला[4]

[1]आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

[2एवं 3]शाकीय विज्ञान विभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

[4]बागवानी विभाग, स्नातकोत्तर कृषि महाविद्यालय, डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा,समस्तीपुर, बिहार

पत्राचारकर्ता: tazeemraza01@gmail.com

परिचय

सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से उत्पन्न कुपोषण विश्व की एक गंभीर सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है। विकासशील देशों में बड़ी जनसंख्या आयरन,जिंक,विटामिन-ए,विटामिन-सी तथा कैल्शियम की कमी से प्रभावित है जिसे ‘छिपी भूख’ कहा जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार आयरन की कमी से होने वाला एनीमिया महिलाओं और बच्चों में सबसे सामान्य समस्या है जबकि विटामिन-ए और जिंक की कमी प्रतिरक्षा प्रणाली को कमजोर कर देती है। भारत जैसे देशों में जहाँ अधिकांश लोग अनाज आधारित आहार पर निर्भर हैं,पोषण विविधता का अभाव एक बड़ी चुनौती है। ऐसी स्थिति में जैव-संवर्धन एक टिकाऊ और किफायती समाधान है जिसमें फसलों के भीतर ही पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाई जाती है। फल फसलों में बेर जिसे ‘गरीबों का सेब’ कहा जाता है,जैव-संवर्धन द्वारा कुपोषण से लड़ने का प्रभावी साधन बन सकता है।

बेर भारत के शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्रों की एक प्रमुख और विश्वसनीय फल फसल है। यह उच्च तापमान, कम वर्षा तथा निम्न उर्वरता वाली भूमि में भी सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। इसकी गहरी और मजबूत जड़ प्रणाली पौधे को सूखा सहनशील बनाती है जिससे यह उन क्षेत्रों में भी अच्छी पैदावार देती है जहाँ अन्य फल फसलें सफल नहीं हो पातीं है। बेर का पौधा बहुवर्षीय होता है और एक बार स्थापित हो जाने पर कई वर्षों तक निरंतर उत्पादन देता है। इसकी देखभाल अपेक्षाकृत सरल होती है तथा उत्पादन लागत भी कम रहती है, जिससे यह छोटे और सीमांत किसानों के लिए विशेष रूप से लाभकारी फसल बन जाती है। आर्थिक दृष्टि से बेर किसानों के लिए आय का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है। ताजे फल के अतिरिक्त इससे बने उत्पाद जैसे सूखा बेर, कैंडी, जैम, मुरब्बा, चटनी और जूस की बाजार में अच्छी माँग रहती है जिससे मूल्य संवर्धन के अवसर बढ़ते हैं। पोषण की दृष्टि से बेर एक अत्यंत समृद्ध फल है। इसमें विटामिन-सी, विटामिन-ए, आयरन, जिंक, कैल्शियम, फास्फोरस तथा आहार रेशा पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। इसके नियमित सेवन से प्रतिरक्षा प्रणाली मजबूत होती है,पाचन सुधरता है और शरीर को आवश्यक ऊर्जा प्राप्त होती है।सामाजिक दृष्टि से भी बेर का महत्व अत्यधिक है क्योंकि यह ग्रामीण और गरीब वर्ग के लोगों के लिए सस्ता और सुलभ पोषण स्त्रोत उपलब्ध कराता है। यही कारण है कि बेर को ‘गरीबों का सेब’ कहा जाता है।इस प्रकार बेर न केवल एक सहनशील और लाभकारी फल है बल्कि पोषण सुरक्षा और ग्रामीण आजीविका सुदृढ़ीकरण में भी

महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।पोषण की दृष्टि से बेर में – कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, आहार रेशा, विटामिन-सी, विटामिन-ए, कैल्शियम, फास्फोरस, आयरन और जिंकपर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। विशेष रूप से बेर में विटामिन-सी की मात्रा कई अन्य फलों की तुलना में अधिक होती है जो शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को सुदृढ़ करता है और आयरन के अवशोषण को बढ़ाता है।इसके अतिरिक्त बेर में पाए जाने वाले फेनोलिक यौगिक फ्लेवोनॉयड्स तथा एंटीऑक्सीडेंट्स शरीर को ऑक्सीडेटिव तनाव से बचाते हैं जिससे हृदय रोग,कैंसर तथा अन्य दीर्घकालीन रोगों का जोखिम कम हो सकता है।

जैव-संवर्धन की अवधारणा और सिद्धांत

जैव-संवर्धन वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से फसलों के खाने योग्य भागों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा और जैव उपलब्धता को बढ़ाया जाता है।

यह मुख्यतः तीन दृष्टिकोणों पर आधारित हैः

- पारंपरिक प्रजनन
- आणविक एवं जैव-प्रौद्योगिकी विधियाँ
- कृषि प्रबंधन आधारित जैव-संवर्धन

कृषि प्रबंधन आधारित जैव-संवर्धन एक ऐसी व्यावहारिक तकनीक है जिसमें उर्वरक प्रबंधन,पर्णीय छिड़काव तथा मृदा संशोधन के माध्यम से फसलों में आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाई जाती है। बेर जैसी फल फसल में इस विधि के माध्यम से आयोडीन,सेलेनियम,आयरन और जिंक जैसे महत्त्वपूर्ण तत्वों की मात्रा को प्रभावी रूप से बढ़ाया जा सकता है।

चित्र 1: बेर वृक्ष में सूक्ष्म पोषक तत्वों के जैव-संवर्धन हेतु पर्णीय छिड़काव

बेर में जैव-संवर्धन के लिए आयोडीन, सेलेनियम, आयरन एवं जिंक का उपयोग

आयोडीनः आयोडीन मानव शरीर में थायरॉयड हार्मोन के निर्माण के लिए आवश्यक होता है। इसकी कमी से घेंघा,मानसिक विकास में कमी तथा बच्चों में वृद्धि अवरोध जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। बेर के पौधों में आयोडीन का पर्णीय छिड़काव करने से फलों में इसकी मात्रा बढ़ाई जा सकती है। इसके लिए पोटेशियम आयोडाइड या पोटेशियम आयोडेट का कम सांद्रता में छिड़काव फूल आने से पहले तथा फल विकास अवस्था में किया जा सकता है। इससे बेर के फल अधिक पौष्टिक बनते हैं और उपभोक्ताओं को आयोडीन का प्राकृतिक स्रोत प्राप्त होता है।

सेलेनियमः सेलेनियम एक शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट तत्व है,जो शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है तथा कैंसर जैसी बीमारियों के जोखिम को कम करने में सहायक माना जाता है। बेर में सेलेनियम की मात्रा बढ़ाने के लिए सोडियम सेलेनेट या सोडियम सेलेनाइट (0.002%) का पर्णीय छिड़काव किया जा सकता है। बहुत कम मात्रा में दिया गया सेलेनियम फल की पोषण गुणवत्ता को बढ़ाता है और पौधे की वृद्धि पर भी सकारात्मक प्रभाव डालता है।

आयरनः आयरन मानव शरीर में हीमोग्लोबिन निर्माण के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसकी कमी से एनीमिया की समस्या होती है जो विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों में अधिक पाई जाती है। बेर के बागानों में फेरस सल्फेट (0.5%) का पर्णीय छिड़काव करने से फलों में आयरन की मात्रा बढ़ाई जा सकती है। इसके साथ-साथ मिट्टी में जैविक पदार्थों की मात्रा बढ़ाने से आयरन की उपलब्धता और अवशोषण में सुधार होता है।

जिंकः जिंक बच्चों की वृद्धि,मस्तिष्क विकास तथा प्रतिरक्षा प्रणाली के लिए अत्यंत आवश्यक तत्व है। बेर के पौधों में जिंक सल्फेट (0.5%) का पर्णीय छिड़काव करने से न केवल पौधों की वृद्धि बेहतर होती है बल्कि फलों की पोषण गुणवत्ता भी बढ़ती है। जिंक की पर्याप्त उपलब्धता से फल आकार,रंग और स्वाद में भी सुधार देखा गया है। इस प्रकार आयोडीन, सेलेनियम, आयरन और जिंक जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग कृषि प्रबंधन आधारित जैव-संवर्धन के माध्यम से बेर को अधिक पौष्टिक बनाने में सहायक सिद्ध हो सकता है। यह विधि सरल, किफायती और किसानों के लिए आसानी से अपनाने योग्य है जिससे जैव-संवर्धित बेर के उत्पादन को बढ़ावा मिल सकता है।

ISSN No. 2583-3316

चित्र 2: बेर फसल में जैव-संवर्धन हेतु प्रयोग में लाए गए रसायन एवं मापन उपकरण

बेर में जैव-संवर्धन की संभावनाएँ

बेर की विभिन्न किस्मों में आयरन,जिंक तथा विटामिन-सी की मात्रा में पर्याप्त भिन्नता पायी जाती है। इस प्राकृतिक विविधता का उपयोग कर उच्च पोषण वाली किस्मों का चयन एवं विकास किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त, जिंक सल्फेट, फेरस सल्फेट, बोरोन तथा मैंगनीज जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों का पर्णीय छिड़काव बेर के फलों की पोषण गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार कर सकता है।

जैव उर्वरकों, जैसे माइकोराइजा और पीएसबी (फॉस्फेट सॉल्युबिलाइजिंग बैक्टीरिया) के उपयोग से भी पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है।

कुपोषण उन्मूलन में जैव-संवर्धित बेर की भूमिका

जैव-संवर्धित बेर का नियमित सेवन आयरन की कमी से होने वाले एनीमिया को कम करने में सहायक हो सकता है। जिंक युक्त बेर बच्चों की वृद्धि, मस्तिष्क विकास तथा प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है। विटामिन-सी से भरपूर बेर शरीर में आयरन के अवशोषण को बढ़ाता है,जिससे दोहरा लाभ मिलता है। ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में जहाँ ताजे फल सीमित मात्रा में उपलब्ध होते हैं वहाँ बेर एक सस्ता और विश्वसनीय पोषण स्रोत बन सकता है।जैव-संवर्धति बेर की खेती से किसानों को बेहतर बाजार मूल्य मिल सकता है।इससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ेंगे तथा पोषण जागरूकता में वृद्धि होगी।

भविष्य की संभावनाएँ

जैव-संवर्धित बेर देश की पोषण सुरक्षा रणनीति का एक महत्वपूर्ण घटक बन सकता है। यदि इसे योजनाबद्ध ढंग से बढ़ावा दिया जाएतो यह ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में कुपोषण से निपटने में सहायक होगा। मध्याह्न भोजन योजना आंगनवाड़ी तथा पोषण अभियान जैसे कार्यक्रमों में इसे शामिल किया जा सकता है। बच्चों और गर्भवती महिलाओं को इसके सेवन से आयरन, जिंक और विटामिन-सी की कमी कम हो सकती है। उच्च पोषण वाली किस्मों के विकास पर अनुसंधान आवश्यक है। साथ ही प्रशिक्षण और विस्तार सेवाओं द्वारा किसानों को जागरूक कर इसकी खेती को प्रोत्साहित किया जा सकता हैजिससे पोषण सुधार के साथ किसानों की आय भी बढ़ेगी।

निष्कर्ष

कुपोषण आज भी देश की एक गंभीर समस्या है जिसका प्रभाव बच्चों महिलाओं और कमजोर वर्गों पर सबसे अधिक पड़ता है। ऐसे में जैव-संवर्धन एक ऐसी तकनीक के रूप में सामने आया है,जो कम लागत में अधिक पोषण उपलब्ध कराने की क्षमता रखता है।बेर एक ऐसा फल है जो सस्ता,सुलभ और कठिन परिस्थितियों में भी उगने वाला है। यदि इसमें आयरन,जिंक और विटामिन-सी जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा बढ़र्या जाए,तो यह कुपोषण से लड़ने का एक सशक्त हथियार बन सकता है।जैव-संवर्धित बेर न केवल उपभोक्ताओं को बेहतर पोषण प्रदान करता है,बल्कि किसानों की आय बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध हो सकता है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ेंगे और पोषण के प्रति जागरूकता भी विकसित होगी।अतः यह कहा जा सकता है कि जैव-संवर्धित बेर कुपोषण के खिलाफ एक प्राकृतिक,सुलभ,किफायती और टिकाऊ समाधान प्रस्तुत करता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

परवल उत्पादन तकनीकः टिकाऊ सब्जी खेती का एक लाभकारी विकल्प

शिव नारायण धाकड़[1]*, अचला सुमन[2], प्रमिला[3] एवं प्रीति उपाध्याय[4]

[1एवं 4]शाकीय विज्ञान विभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

[2एवं 3]बागवानी विभाग, स्नातकोत्तर कृषि महाविद्यालय, डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा,समस्तीपुर, बिहार

पत्राचारकर्ता: sndhakad.horti999@gmail.com

परिचय

परवल, भारत की पारंपरिक सब्जी फसलों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है और यह कद्दूवर्गीय कुल की बहुवार्षिक बेलदार फसल है। यह फसल अपने पोषण गुणों, औषधीय उपयोगिता तथा स्थिर आर्थिक लाभ के कारण किसानों और उपभोक्ताओं दोनों के बीच लोकप्रिय है। परवल के कोमल फल हल्के, सुपाच्य और स्वास्थ्यवर्धक माने जाते हैं, जिससे यह दैनिक आहार का एक महत्वपूर्ण भाग बन चुका है। आधुनिक कृषि तकनीकों के विकास के साथ परवल की खेती अब पारंपरिक सीमाओं से आगे बढ़कर व्यावसायिक स्वरूप ले चुकी है। उन्नत किस्मों, वैज्ञानिक पोषण प्रबंधन और उचित सिंचाई व्यवस्था के माध्यम से इसकी उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि संभव हुई है। बहुवार्षिक प्रकृति के कारण यह फसल लंबे समय तक उत्पादन देती है, जिससे किसानों को निरंतर आय प्राप्त होती है। पोषण सुरक्षा, आय वृद्धि और टिकाऊ सब्जी उत्पादन की दृष्टि से परवल की उन्नत खेती वर्तमान कृषि प्रणाली में एक महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में उभर रही है।

पोषण और स्वास्थ्य लाभ

परवल हल्की, सुपाच्य और स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद सब्जी है। इसमें पानी ज्यादा होता है, जो शरीर को ठंडक देता है। इसमें चर्बी बहुत कम होती है, इसलिए यह मोटापा और मधुमेह वालों के लिए भी अच्छी मानी जाती है। इसमें मौजूद रेशा पेट साफ रखता है और कब्ज से बचाता है। परवल में कैल्शियम, लौह और विटामिन A व C पाए जाते हैं, जो शरीर को ताकत देते हैं और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाते हैं। रक्त निर्माण और शरीर की सामान्य चयापचय क्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

उत्पत्ति एवं भारत में वितरण

परवल की उत्पत्ति भारतीय उपमहाद्वीप में मानी जाती है और प्राचीन समय से इसकी खेती यहाँ की पारंपरिक कृषि प्रणाली का हिस्सा रही है। भारत को इसका प्रमुख उत्पत्ति केंद्र माना जाता है, जहाँ से यह फसल धीरे-धीरे दक्षिण एशिया के अन्य देशों जैसे पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल और श्रीलंका तक पहुँची। आज इन सभी देशों में परवल एक महत्वपूर्ण सब्जी

फसल के रूप में उगाई जाती है। भारत के भीतर इसकी खेती उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और गुजरात सहित कई राज्यों में व्यापक रूप से की जाती है। विशेष रूप से गंगा नदी के दोनों किनारों के दियारा क्षेत्रों की उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी पर परवल की खेती अत्यंत सफल मानी जाती है। बिहार–झारखंड सीमा में बक्सर से लेकर साहेबगंज (राजमहल) तक गंगा तटीय पट्टी पर इसकी व्यावसायिक खेती बड़े पैमाने पर होती है, जहाँ अनुकूल जलवायु और मिट्टी के कारण इसकी उत्पादकता अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है।

जलवायु आवश्यकताएँ

परवल की सफल खेती के लिए गर्म, उष्ण एवं आर्द्र जलवायु सर्वाधिक उपयुक्त मानी जाती है। 100–150 सेमी औसत वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र इसकी खेती के लिए अनुकूल होते हैं। उच्च आर्द्रता एवं मध्यम से उच्च तापमान (25–35°C) पर पौधों की वृद्धि एवं फलन बेहतर होता है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में भी समुचित सिंचाई एवं जल प्रबंधन अपनाकर परवल की सफल खेती की जा सकती है।

भूमि का चयन एवं खेत की तैयारी

परवल की खेती के लिए भारी मिट्टी को छोड़कर अधिकांश प्रकार की मृदाएँ उपयुक्त होती हैं। उत्तम उत्पादन हेतु अच्छी जल निकास वाली दोमट एवं बलुई दोमट मिट्टी को सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। दियारा क्षेत्रों की जलोढ़ मिट्टी में परवल की खेती विशेष रूप से सफल रहती है।

खेत की तैयारी के लिए 3–4 बार गहरी जुताई कर मिट्टी को भुरभुरा बनाया जाता है। जुताई के बाद खेत को कुछ समय के लिए खुला छोड़ दिया जाता है, जिससे मृदा में उपस्थित हानिकारक कीट एवं खरपतवार नष्ट हो सकें। रोपाई से पूर्व पाटा लगाकर खेत को समतल कर लेना चाहिए, ताकि जल निकास एवं पौध स्थापना सुचारु रूप से हो सके।

उन्नत किस्में

उत्तर बिहार में परवल की खेती के लिए कई उन्नत और स्थानीय किस्में उपलब्ध हैं, जिनमें डॉ.राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा से विकसित राजेन्द्र परवल–1 और राजेन्द्र परवल–2 विशेष रूप से अनुशंसित हैं, क्योंकि ये स्थानीय जलवायु, गंगा के दियारा क्षेत्रों की मिट्टी और सिंचाई परिस्थितियों के अनुकूल हैं, साथ ही इनमें फल आकार एकसार, रंग आकर्षक और सामान्य रोगों के प्रति सहनशीलता देखने को मिलती है, जिससे किसानों को स्थिर और अधिक लाभकारी उत्पादन मिलता है। इसके अतिरिक्त, स्वर्ण रेखा, स्वर्ण अलौकिक, शाकोलिया, डंडाली, छोटा हिल, थहली, सी.एच.ई.एस. इलाइट लाइन और सी.एच.ई.एस. हाइब्रिड जैसी उन्नत किस्में भी विभिन्न क्षेत्रों में अच्छी उपज देती हैं। उत्तर प्रदेश के फैजाबाद क्षेत्र से विकसित परवल-1 से परवल-5तक की किस्में और बिहार शरीफ, दामोदर तथा काजिल जैसी स्थानीय प्रजातियाँ भी किसानों के बीच लोकप्रिय हैं और विभिन्न परिस्थितियों में संतोषजनक उत्पादन प्रदान करती हैं।

बुवाई की विधि

परवल की खेती आमतौर पर बीज से नहीं, बल्कि लताओं या जड़ों की कलम से की जाती है। मैदानी इलाकों में फरवरी–मार्च का समय सबसे अच्छा माना जाता है, जबकि दियारा क्षेत्रों में मध्य नवंबर में बुवाई करने से अच्छे परिणाम मिलते हैं।मैदानी क्षेत्रों में एक हेक्टेयर में लगभग 4500–5000 लताएं और दियारा क्षेत्रों में 3500–4000लताएं पर्याप्त होती हैं। पौधों के बीच लगभग 2मीटर और कतारों के बीच 2 मीटर की दूरी रखनी चाहिए।

खाद और उर्वरक

परवल की अच्छी बढ़वार के लिए खेत में भरपूर जैविक खाद देना बहुत जरूरी है। खेत की तैयारी के समय 200–250 क्विंटल सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर डालना लाभदायक होता है। इसके साथ जरूरत के अनुसार रासायनिक खाद भी दी जा सकती है। अगर मिट्टी में किसी पोषक तत्व की कमी हो, तो मिट्टी की जांच कराकर उसी हिसाब से खाद देना ज्यादा फायदेमंद रहता है।

खरपतवार नियंत्रण

रोपाई के बाद खेत में समय-समय पर निराई-गुड़ाई करते रहना चाहिए। खरपतवार पौधों की बढ़वार रोकते हैं, इसलिए इन्हें समय पर निकालना जरूरी है। साथ ही लताओं को बीच-बीच में पलटते रहना चाहिए, जिससे पौधे स्वस्थ रहते हैं।

सहारा देना

जब परवल की बेलें बढ़ने लगती हैं, तब उन्हें सहारे की जरूरत होती है। इसके लिए बांस, लकड़ी या मचान का इस्तेमाल किया जाता है। दो कतारों के बीच लगभग 2 मीटर की दूरी पर खंभे गाड़कर लताओं को सुतली से बांध दिया जाता है। इससे पौधों को हवा और रोशनी अच्छी मिलती है और फल भी साफ-सुथरे बनते हैं।

ISSN No. 2583-3316

सिंचाई

परवल की फसल में नियमित सिंचाई जरूरी होती है। गर्मी के मौसम में 5–6 दिन के अंतर पर और बाकी मौसम में 8–10 दिन के अंतर पर पानी देना चाहिए। खेत में पानी जमा नहीं होने देना चाहिए, क्योंकि इससे पौधों को नुकसान हो सकता है।

उपज

अगर परवल की खेती सही तरीके से की जाए, तो अच्छी पैदावार मिलती है।पहले साल लगभग 50–75 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, जबकि दूसरे और तीसरे साल 125–150 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

रोग और उनका नियंत्रण

चूर्णिल आसिता में पत्तियों पर सफेद पाउडर जैसा दिखाई देता है, जिससे पौधा कमजोर हो जाता है। मृदुरोमिल आसिता में पत्तियों पर पीले धब्बे बनते हैं और नीचे की तरफ फफूंद जम जाती है।फल सड़न रोग में फल खराब होने लगते हैं, इसलिए फलों को जमीन से बचाकर रखना चाहिए।सूत्रकृमि के प्रकोप से पत्तियां पीली पड़ जाती हैं। इसके लिए नीम की खली या लकड़ी का बुरादा खेत में डालना काफी फायदेमंद होता है।

निष्कर्ष

परवल की उन्नत खेती किसानों के लिए एक स्थायी और लाभकारी कृषि विकल्प के रूप में उभर रही है। इसकी बहुवार्षिक प्रकृति, कम कीट-रोग प्रकोप, नियमित उत्पादन क्षमता और उच्च बाजार मांग इसे एक भरोसेमंद नकदी फसल बनाती है। वैज्ञानिक ढंग से भूमि तैयारी, उन्नत किस्मों का चयन, संतुलित पोषण प्रबंधन, सहारा व्यवस्था और समय पर सिंचाई अपनाकर उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि की जा सकती है। पोषण की दृष्टि से भी परवल एक स्वास्थ्यवर्धक सब्जी है, जो संतुलित आहार और जनस्वास्थ्य दोनों में महत्वपूर्ण योगदान देती है। बदलती जलवायु परिस्थितियों में भी यह फसल अनुकूलन क्षमता प्रदर्शित करती है, जिससे यह भविष्य की टिकाऊ सब्जी खेती के लिए उपयुक्त होती है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

सेमियालता से लाख उत्पादन - ग्रामीण आजीविका हेतु वरदान

अनुभा श्रीवास्तव*, संजय सिंह एवं अनीता तोमर
आई सी एफ़ आर ई- पारिस्थितिक पुनर्स्थापन केन्द्र, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश
पत्राचारकर्ता: anubhasri_csfer@icfre.org

परिचय

लाख एक प्राकृतिक राल है जो केरिया लेका नामक कीट द्वारा उत्पन्न होती है। यह मादा कीट के शरीर से तरल द्रव के रूप में निकलती है और हवा के संपर्क में आने पर कठोर हो जाती है। भारतवर्ष में लाख के उत्पादन में झारखंड एक अग्रणी राज्य है, जो कुल उत्पादन का लगभग 54.60% योगदान देता है। इसका उत्पादन विशेषतः जंगलों या जंगल के किनारे रहने वाले जनजाति समुदाय द्वारा किया जाता है। इन जनजातियों के लिए लाह उत्पादन जीविका का एक विशेष साधन है। फ्लेमेंजिया सेमियालता ऐसा ही एक उपयुक्त पौधा है, जो बहुवर्षीय है। इस में लाह के पोषक तत्व अधिकता में उपस्थित रहते हैं। इस की ऊंचाई लगभग 2 से 3 मीटर तक होती है। इस पौधे में फूल अक्तूबर- नवंबर महीने में आते हैं और इस का फल जनवरी- फरवरी महीने तक विकसित हो जाता है। फ्लेमेंजिया सेमियालता जाड़े के मौसम में कुसुमी लाख उत्पादन के लिए बहुत उपयुक्त पाया गया है।

पौध की तैयारी और रोपाई

- फ्लेमेंजिया सेमियालता पौधे के लिए मिट्टी में अम्लीयता के साथ पीएच 5.5 के आसपास होना अच्छा होता है। इस की नर्सरी थोड़ी ढलाऊ जगह पर होनी चाहिए, जिससे अतिरिक्त पानी आसानी से निकाला जा सके। फ्लेमेंजिया सेमियालता की पौध बीज के अलावा डालियों द्वारा भी नर्सरी में आसानी से तैयार की जा सकती है।
- बीज बोआई से पहले नर्सरी में 9 x1.2 मीटर के लंबे चौड़े और 4 इंच ऊंचे बैड तैयार कर लें और बीज को सीधे बेड में या प्लास्टिक की थैलियों में, जिसमें 2:1:1 के अनुपात में मिट्टी, सड़ी गोबर की खाद व बालू का मिश्रण भर कर अप्रैल मई महीने में बीज की बोआई की जा सकती है।

बीज बोआई के बाद समय समय पर पलटते रहना चाहिए। नर्सरी में पौध से पौध की दूरी 8-10 सेंटीमीटर कर देने से पौधे की बढ़वार अच्छी होती है।

- पौध रोपण के एक महीने पहले ही मई जून महीने में 45x45x45 सेंटीमीटर आकार के गड्ढे सिंचित व 30x30x30 सेंटीमीटर असिंचित इलाकों के लिए खोद लेने चाहिए। गड्ढों की खुदाई पौधे से पौधे की दूरी 1.2 मीटर व लाइन से लाइन की दूरी 1.2 मीटर के आधार पर करनी चाहिए।
- पौध रोपण के पहले गड्ढे में 5-10 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद डालनी चाहिए। फ्लेमेंजिया पौधे की लंबाई कम होने के कारण इस पर लाख कीट पालन दूसरे पोषक पौधों के तुलना में ज्यादा आसान है और पौध रोपण के एक से डेढ़ साल बाद लाख कीट को पौधों पर छोड़ा जाता है।
- फ्लेमेंजिया की खेती करते समय लाइनों के बीच में फल व सब्जियों की खेती कर ज्यादा लाभ कमा सकते हैं। फ्लेमेंजिया

ISSN No. 2583-3316

का पौधा छोटा होने के कारण इस का प्रबंधन भी ठीक तरह से किया जा सकता है।

- फ्लेमेंजिया पौधे पर लाख कीट की कुसुमी प्रजाति उपयुक्त पाई गई है। लाभ की दृष्टि से जाड़े वाली फसल ज्यादा उपयुक्त है। कुसुमी लाख कीट को जुलाई महीने में 20 ग्राम प्रति पौधे की दर से छोड़ना चाहिए।
- लाख लगाने के 21 दिन बाद पेड़ों में बंधी हुई बीहन लाख, जिसे फूंकी भी कहा जाता है को उतार लेना चाहिए व फूंकी लाख को खत्म न कर के उसे छील कर विक्रय करना चाहिए।

लाख कीट की देख भाल

पौधे पर लाख कीट छोड़ने के एक महीने बाद या फूंकी उतारने के एक सप्ताह बाद नुकसानदायक कीटों का प्रकोप शुरू हो जाता है। इसी अवस्था पर ही कीटनाशक दवा का पहला छिड़काव 60 दिन बाद आवश्यकतानुसार करना चाहिए। इन कीटनाशकों का छिड़काव लाख कीट के दुश्मन कीट जैसे काली तितली, सफेद तितली व क्रोइसोपा आदि से बचाव के लिए किया जाता है।

किसी भी अवस्था में नर लाख कीट निकलने के समय कीट नाशक या फफूंद नाशक दवा का छिड़काव नहीं करना चाहिए। ऐसा करने से नर कीट मर सकते हैं। जिस से निषेचन क्रिया नहीं हो पाएगी और अगली फसल के लिए बीहन की पैदावार नहीं मिलेगी। फफूंद से बचाव के लिए बाविस्टीन दवा की 3 ग्राम मात्रा का 14 लिटर पानी में घोल बना कर छिड़काव किया जाना चाहिए।

आर्थिकी

सेमियालता अरहर की तरह दिखने वाला पौधा है। जून-जुलाई माह में रोपने के बाद यह आगामी एक वर्ष, जून-जुलाई में वयस्क हो जाता है। इसके पश्चात यह लाख उत्पादन के लिए तैयार हो जाता है। सेमियालता में कुसमी लाख को ही रोपा जाता है। 2 से तीन माह के अन्दर लाख परिपक्व हो जाता है। एक पौधे से 250 से 300 ग्राम तक लाख प्राप्त होता है। एक हेक्टेयर में 7000 पौधों की रोपणी की जा सकती है। एक सीजन में 17.5 से 21.5 कुंतल लाख का उत्पादन होता है। वर्तमान में कुसमी लाख की कीमत 200 रु प्रति किग्रा की दर से किसानों को प्रति वर्ष 3.5 से 4.3 लाख की कुल आय प्राप्त हो सकती है। कुसुम तथा पलाश के पेड़ों में लगातार कमी आ रही है, जिससे लाख उत्पादन पर विपरीत असर पड़ रहा है। सेमियालता इस कमी को पूरा करने मे उपयोगी सिद्ध होगा।

1. 7000 पौधे - 1 हेक्टयर या 10000 वर्ग मीटर, दूरी 1.2 x 1.2m
2. लाख उत्पादन व्यय - 1.25 लाख /वर्ष
3. प्रति पौध लाख उत्पादन - 250–300 ग्राम
4. प्रति हेक्टयर-17.5 -21.5 कुंतल लाख का उत्पादन
5. प्रति किग्रा लाख मूल्य – रु 200/- लगभग
6. कुल लाभ - 3.5 से 4.3 लाख /वर्ष
7. शुद्ध लाभ (6- 2) - 2.25 से 3.05 लाख /वर्ष

निष्कर्ष

सब्जियों की खेती के विकल्प के रूप में सेमियालता से लाख का उत्पादन किसानों की आय बढ़ा सकता है। यह कम उपजाऊ और खराब मिट्टी में भी उगाया जा सकता है। इसकी खेती से किसानों के लाभ में 69% तक की वृद्धि हो सकती है। लाख की कटाई के बाद शाखाओं को जमीन के पास से काटा जा सकता है, जिससे नई शाखाएं जल्दी आती हैं। सेमियालता की खेती से मिट्टी की उर्वरता में भी सुधार हो सकता है। इसकी खेती स्थानीय समुदायों, कृषकों,वनवासियों तथा अन्य पौधा रोपण संस्थाओं के लिए आर्थिक स्थिरता और आत्म निर्भरता का साधन सिद्ध हो सकता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

अमेजन वेब सर्विस (AWS) ग्लोबल वार्मिंग और कृषि - एक आधुनिक डिजिटल समाधान

अंजना गुप्ता*, रश्मि शुक्ला, डी. के. सिंह, नीलू विश्वकर्मा एवं ऋचा सिंह

कृषि विज्ञान केंद्र, जबलपुर, मध्य प्रदेश

पत्राचारकर्ता: blogger.sp2020@gmail.com

परिचय

आज की दुनिया में जलवायु परिवर्तन (Global Warming) न सिर्फ पर्यावरण को प्रभावित कर रहा है, बल्कि कृषि जैसी महत्वपूर्ण मानव गतिविधि पर भी गहरा प्रभाव डाल रहा है। तापमान में असामान्य वृद्धि, अनियमित वर्षा, मिट्टी की उर्वरता में गिरावट और प्राकृतिक आपदाओं की बढ़ती आवृत्ति किसानों की उत्पादकता को सीधे प्रभावित करती हैं। ऐसे समय में तकनीक - खासकर Cloud Computing- कृषि क्षेत्र को अधिक लचीला, टिकाऊ और स्मार्ट बनाने में बड़ी भूमिका निभा रही है। इन्हीं तकनीकों में (Amazon Web Services) सबसे अग्रणी मंचों में से एक है, जिसका उपयोग दुनिया भर में कृषि-संबंधित समस्याओं को हल करने, फसल उत्पादन को बढ़ाने और जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने के लिए किया जा रहा है।

1. AWS क्या है और यह कृषि में क्यों महत्वपूर्ण है?

AWS एक Cloud Computing प्लेटफॉर्म है जो स्टोरेज, कंप्यूटिंग, डेटा एनालिटिक्स, मशीन लर्निंग, IoT सैटेलाइट डेटा एनालिसिस, और कई अन्य सेवाएँ प्रदान करता है।

कृषि के लिए AWS विशेष रूप से इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकिः

- यह विशाल डेटा को संग्रहित और विश्लेषित कर सकता है।
- IoT डिवाइसों से रीयल-टाइम डेटा प्राप्त कर सकता है।
- AI/ML मॉडल बनाकर मौसम, रोग और फसल उत्पादन की भविष्यवाणी कर सकता है।
- किसानों, शोधकर्ताओं और कृषि कंपनियों को दूर-दराज क्षेत्रों में भी डिजिटल समाधान प्रदान करता है।
- कम लागत पर स्केलेबल समाधान उपलब्ध कराता है, जो छोटे और बड़े दोनों किसानों की जरूरतें पूरी करता है।

2. Global Warming से Agriculture में उत्पन्न चुनौतियाँ

कृषि क्षेत्र पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता हैः

- **मौसम पैटर्न का बदलनाः** पहले जहां बारिश समय पर होती थी, अब अनियमित हो गई है।
- **सूखा और बाढ़ः** तापमान बढ़ने से सूखा बढ़ रहा है, वहीं कुछ स्थानों पर अचानक बाढ़ आ जाती है।
- **कीट और रोगों में वृद्धिः** गर्म वातावरण में कीट तेजी से पनपते हैं, जिससे फसलें नष्ट होती हैं।

AWS **मिट्टी की उर्वरता में कमीः** तापमान बढ़ने और वर्षा चक्र बदलने से मिट्टी की संरचना बिगड़ती है।

इन सभी समस्याओं के कारण कृषि उत्पादन में गिरावट आने लगी है, और किसानों को अधिक तकनीकी हस्तक्षेप की आवश्यकता महसूस हो रही है। यहीं AWS एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

3. AWS की तकनीकें जो कृषि और जलवायु समस्याओं को हल करती हैं

AWS IoT (Internet of Things)

कृषि में कई Smart Sensors लगाए जाते हैं जो मिट्टी की नमी, तापमान, pH स्तर, मौसम का तापमान आदि डेटा रीयल टाइम में बताते हैं।

AWS IoT Core इन सेंसरों से डेटा लेकर उसे Cloud पर भेजता है और किसानः

- सिंचाई अपने आप नियंत्रित कर सकते हैं
- उर्वरक की मात्रा तय कर सकते हैं

- फसल की सेहत मॉनिटर कर सकते हैं

इससे पानी और संसाधनों का कम उपयोग होता है और Global Warming का प्रभाव कम पड़ता है।

AWS Machine Learning (SageMaker)

AWS SageMaker का उपयोग कर वैज्ञानिक और कृषि विशेषज्ञ AI मॉडल बना सकते हैं। यह मॉडलः

- मौसम की भविष्यवाणी
- फसल उत्पादन अनुमान
- रोग और कीट की भविष्यवाणी
- मिट्टी की गुणवत्ता विश्लेषण
- उर्वरक की सही मात्रा का सुझाव

जैसी सुविधाएँ प्रदान करते हैं।

यह किसानों को सही समय पर सही निर्णय लेने में मदद करता है।

AWS Ground Station (Satellite Data)

AWS Ground Station उपग्रह से प्राप्त इमेजेज और डेटा को तेजी से प्रोसेस करता है।

यह डेटा उपयोगी होता हैः

- खेतों में नमी के स्तर को जानने में
- बढ़ती गर्मी के प्रभाव का पता लगाने में
- सूखा या बाढ़ की निगरानी
- फसल की वृद्धि देखने में

सैटेलाइट आधारित मॉनिटरिंग Global Warming के प्रभाव का वास्तविक समय में विश्लेषण प्रदान करती है।

AWS Data Analytics Services

सेवाएँ जैसेः

- Amazon Athena
- Amazon Redshift
- Amazon EMR
- AWS Lambda

कृषि से संबंधित बड़े डेटा सेट को विश्लेषित कर जलवायु ट्रेंड और कृषि पैटर्न बताती हैं।

इससे सरकारें, NGO और कृषि कंपनियां नीति और समाधान विकसित कर पाती हैं।

AWS Climate & Sustainability Solutions

AWS 'Climate Tech' और 'Sustainability' पर विशेष फोकस रखता है। यह

- कार्बन उत्सर्जन ट्रैक करने
- ऊर्जा खपत कम करने
- नवीकरणीय ऊर्जा उपयोग बढ़ाने

के लिए भी समाधान प्रदान करता है ताकि कृषि वातावरण के अनुकूल बने।

4. कृषि में AWS के व्यावहारिक उपयोग

1. Precision Agriculture (सटीक कृषि)

AWS- और AI मॉडल सिंचाई, खाद, दवाइयों और बीज की मात्रा सटीक बताते हैं, जिससे संसाधन बचते हैं।

2. Smart Irrigation

AWS IoT की मदद से किसानः

- पानी की बर्बादी रोक सकते हैं
- नमी के आधार पर सिंचाई कर सकते हैं
- बिजली की बचत कर सकते हैं

Global Warming के कारण जल संकट हो रहा है,ऐसे में Smart Irrigation बहुत उपयोगी है।

3. Crop Disease Detection

AI मॉडल तस्वीरों के आधार पर रोग और कीट की पहचान कर लेते हैं। किसानों को बीमारी फैलने से पहले चेतावनी मिल जाती है।

4. Climate & Resilient Farming

AWS के डेटा से किसानः

- कौन सी फसल किस मौसम में उगानी चाहिए
- कौन सा बीज गर्मी सहन कर सकता है
- कौन सा खेत सूखे से सुरक्षित है

जैसे निर्णय ले सकते हैं।

5. Global Warming को रोकने में AWS की भूमिका

कृषि ही नहीं, AWS कई क्षेत्रों में Global Warming को कम करने में मदद करता हैः

- अपने डेटा सेंटर में 100ः नवीकरणीय ऊर्जा उपयोग की दिशा में काम
- Carbon Footprint Calculator से कंपनियों को उत्सर्जन मापने में सहायता
- Sustainable farming को बढ़ावा

इस तरह AWS तकनीक के जरिए पर्यावरण संरक्षण में योगदान देता है।

6. भारत में AWS का महत्व

भारत जैसे कृषि-प्रधान देश में AWS के समाधान बेहद प्रभावशाली हो सकते हैंः

- छोटे किसानों को मोबाइल पर रीयल-टाइम डेटा

- सरकार की कृषि योजनाओं में डेटा विश्लेषण
- मौसम पूर्वानुमान में सुधार
- प्राकृतिक आपदाओं का पूर्व चेतावनी प्रणाली
- कृषि उत्पादों की Supply Chain Management

इन सभी के माध्यम से भारत Global Warming के प्रभाव को कम कर बेहतर कृषि प्रणाली बना सकता है।

निष्कर्ष

AWS कृषि और जलवायु परिवर्तन के बीच एक पुल की तरह काम करता है। जहाँ एक ओर Global Warming से कृषि पर गंभीर खतरा मंडरा रहा है, वहीं AWS आधुनिक तकनीकों जैसे IoT, Machine Learning, Cloud Storage और Satellite Data की मदद से किसानों को सशक्त बना रहा है। Smart Farming, Precision Agriculture और Climate Analysis जैसे उपकरणों के माध्यम से AWS दुनिया भर में कृषि को अधिक टिकाऊ, उत्पादक और जलवायु-लचीला बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

सन्दर्भ

https://aws.amazon.com

https://aws.amazon.com/marketplace/

❖❖

ISSN No. 2583-3316

निर्यात-गुणवत्ता वाले फल प्राप्त करने हेतु लीची गुच्छों की बैगिंग तकनीक

शिल्पा[1]*, प्रियंका ठाकुर[2] एवं सिमरन कश्यप[3]
[1]फल विज्ञान विभाग, क्षेत्रीय बागवानी अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण केंद्र, धौलाकुआं, सिरमौर
[2]क्षेत्रीय बागवानी अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण केंद्र, धौलाकुआं, सिरमौर
[3]पेशेवर युवा- II, पुष्प कृषि और भूदृश्य वास्तुकला, क्षेत्रीय बागवानी अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण केंद्र, धौलाकुआं, सिरमौर
पत्राचारकर्ता: shilpananglia1990@gmail.com

परिचय

लीची *(Litchi chinensis Sonn.)* को विश्वभर मेंफलों की रानीके रूप में जाना जाता है। यह सैपिन्डेसी (Sapindaceae) कुल की एक प्रमुख उपोष्णकटिबंधीय सदाबहार फल फसल है, जो अपने आकर्षक लाल छिलके, अर्ध-पारदर्शी रसदार सफेद गूदे, उच्च पोषण मूल्य, विशिष्ट सुगंध एवं उत्कृष्ट स्वाद के कारण अत्यधिक लोकप्रिय है। भारत विश्व के प्रमुख लीची उत्पादक देशों में से एक है, जहाँ बिहार, पश्चिम बंगाल, उत्तराखंड, झारखंड, हिमाचल प्रदेश, असम और नागालैंड इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। भारत के उत्तरी एवं पूर्वी भागों में लीची के फल मई–जून के दौरान परिपक्व होते हैं। यह अवधि अत्यधिक उच्च तापमान, कम सापेक्षिक आर्द्रता तथा गर्म एवं शुष्क हवाओं से युक्त होती है। इन प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण लीची उत्पादन में कई जैविक एवं भौतिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, जिनमें फल फटना (क्रैकिंग), सनबर्न (धूप से झुलसना), असमान रंग विकास, फल गिरना तथा फल बेधक कीटों का प्रकोप प्रमुख हैं। ये सभी समस्याएँ मिलकर न केवल उपज को प्रभावित करती हैं, बल्कि फलों की गुणवत्ता और बाजार मूल्य को भी काफी कम कर देती हैं।

लीची में फल वृद्धि एवं विकास के दौरान समस्याएँ

लीची के फलों की वृद्धि एवं विकास मुख्यतः अप्रैल–मई माह में होता है। इस अवधि में यदि तापमान 40 ± 2°C तक पहुँच जाए तथा सापेक्षिक आर्द्रता 50% से कम हो, तो फलों की त्वचा पर हल्के भूरे या काले धब्बे विकसित हो जाते हैं, जो आगे चलकर सनबर्न का कारण बनते हैं। साथ ही, तापमान एवं नमी में असंतुलन के कारण फल की बाहरी त्वचा और आंतरिक गूदे की वृद्धि में अंतर आ जाता है, जिससे फल फटने की समस्या उत्पन्न होती है।

इसके अतिरिक्त, यदि फल परिपक्वता के समय बादल छाए रहें या वर्षा हो जाए, तो फल बेधक कीटों (विशेषकर *Conopomorpha sinensis)* का गंभीर प्रकोप देखने को मिलता है। इन समस्याओं के कारण 30–40% तक उपज हानि की सूचना विभिन्न अध्ययनों में दी गई है।

लीची गुच्छों की बैगिंग तकनीक

लीची उत्पादन में उपरोक्त समस्याओं के समाधान हेतु ऑन-ट्री गुच्छा बैगिंग तकनीकएक प्रभावी एवं पर्यावरण-अनुकूल विकल्प के रूप में उभरी है। इस तकनीक में फल विकास की प्रारंभिक अवस्था में लीची के गुच्छों को विशेष प्रकार के बैग से ढक दिया जाता है, जिससे फलों के चारों ओर एक अनुकूल सूक्ष्म-जलवायु (microclimate) बन जाती है।

अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि फल लगने के 25–30 दिन बाद लीची गुच्छों की बैगिंग करने से फलों का रंग, आकार, वजन तथा समग्र गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार होता है। साथ ही, यह तकनीक फलों को कीटों, पक्षियों, सनबर्न एवं क्रैकिंग से प्रभावी सुरक्षा प्रदान करती है।

बैगिंग सामग्री एवं बैगिंग का उपयुक्त समय

लीची में बैगिंग की सफलता प्रयुक्त सामग्री की गुणवत्ता एवं बैगिंग के समय पर निर्भर करती है। सामान्यतः यूवी-उपचारित गैर-बुने (नॉन-वोवन) पॉलीप्रोपाइलीन बैग, गुलाबी अथवा सफेद रंग के, सर्वाधिक प्रभावी पाए गए हैं। इन बैगों की मानक विशेषताएँ इस प्रकार हैं:

- **लंबाई:** 20 इंच
- **चौड़ाई:** 16 इंच
- **मोटाई:** 30 GSM
- **डोरी सहित, पुनः** उपयोग योग्य

ये बैग बाजार में ₹ 6–8 प्रति बैग की दर से उपलब्ध होते हैं। बैगिंग हमेशा साफ, शुष्क एवं धूप वाले दिन करनी चाहिए, जब फलों की सतह पर नमी न हो। स्वस्थ एवं समान आकार वाले गुच्छों को सावधानीपूर्वक बैग में डालकर, बैग के खुले सिरे को धागे या डोरी से अच्छी तरह बाँध दिया जाता है।

आईसीएआर–अखिल भारतीय समन्वित फल अनुसंधान परियोजना (ICAR-AICRP on Fruits) द्वारा विभिन्न क्षेत्रों के लिए 25–30 दिन (फल लगने के बाद) बैगिंग का समय अनुशंसित किया गया है।

लीची में बैगिंग के प्रमुख लाभ

विभिन्न अनुसंधानों एवं क्षेत्रीय परीक्षणों के आधार पर लीची में बैगिंग के निम्नलिखित लाभ बताए गए हैं:

- विपणन योग्य उपज में उल्लेखनीय वृद्धि (फल भार 25 ग्राम से अधिक)
- 97% से अधिक फल सनबर्न एवं क्रैकिंग से मुक्त
- आकर्षक, एकसमान एवं चमकदार लाल रंग का विकास
- फल बेधक कीटों में 95% से अधिक कमी, जिससे कीटनाशकों के प्रयोग में उल्लेखनीय कमी
- फलों का आकार एवं रूप अधिक समान, जो निर्यात एवं खुदरा बाजार के लिए उपयुक्त
- पक्षियों एवं यांत्रिक क्षति से सुरक्षा
- तुड़ाई, परिवहन, संभाल एवं भंडारण में सुविधा
- उच्च बिक्री मूल्य एवं बेहतर लाभ–लागत अनुपात (B:C ratio)
- कटाई-पूर्व फल गिरने में लगभग 100% तक कमी

बैगिंग तकनीक को अपनाने में चुनौतियाँ

लीची गुच्छों की बैगिंग एक प्रभावी तकनीक है, फिर भी इसके व्यापक अपनाने में कुछ चुनौतियाँ हैं। यह एक श्रम-साध्य प्रक्रिया है, जिसमें अधिक मानव श्रम एवं समय की आवश्यकता होती है। छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए बैगिंग सामग्री की लागत भी एक बाधा हो सकती है। इसके अतिरिक्त, बैगिंग की सही विधि अपनाने हेतु किसानों को उचित प्रशिक्षण एवं तकनीकी मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है।

बैगिंग और बिना बैगिंग वालेलीची फल

निष्कर्ष

लीची गुच्छों की ऑन-ट्री बैगिंग एक सरल, किसान-मित्र, सुरक्षित एवं पर्यावरण-अनुकूल तकनीक है। यह फलों की भौतिक बनावट, रंग एवं गुणवत्ता में सुधार के साथ-साथ कीटों एवं शारीरिक विकारों (सनबर्न एवं क्रैकिंग) से प्रभावी सुरक्षा प्रदान करती है। उचित समय एवं सही सामग्री के साथ अपनाई गई यह तकनीक निर्यात-गुणवत्ता वाली लीची के उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है तथा किसानों की आय बढ़ाने में सहायक सिद्ध होती है।

संदर्भ

ICAR-AICRP on Fruits (2022). *Package of Practices for Litchi*. Indian Council of Agricultural Research, New Delhi.

Singh, G., Nath, V., & Pandey, S. D. (2019). Effect of pre-harvest fruit bagging on quality and yield of litchi. *Indian Journal of Horticulture*, 76(3): 456–461.

Kumar, S., Das, B., Dhakar, M. K., *et al.*, (2024). Bagging of litchi bunches to harvest export-quality fruits. *Indian Horticulture*, May–June Issue.

Nath, V., & Pandey, S. D. (2017). Physiological disorders of litchi and their management. *Advances in Horticultural Research,* ICAR Publication.

Ministry of Agriculture & Farmers Welfare (2021). *Status of Litchi Cultivation in India.* Government of India.

❖❖